दो सेर धान

दो सेर धान

(मलयालम भाषा का उत्कृष्टतम उपन्यास)

लेखक
तकषी शिवशंकर पिल्लै

अनुवादिका
श्रीमती भारती विद्यार्थी

साहित्य अकादेमी की ओर से
आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली

दो शब्द

यह पुस्तक मलयालम की 'रंटिटंङषी' (दो सेर धान) नाम की पुस्तक का अनुवाद है। यह शोषित मजदूरों के संघर्षमय क्लिष्ट जीवन का दर्पण है। जमाने की फेर-बदल से जीवन और समाज के हर हिस्से में परिवर्तन हो गए हैं, पर खेतों में काम करने वाले मजदूरों की स्थिति अभी तक नहीं सुधरी। उनकी मजदूरी दो सेर की दो सेर ही रह गई। इस पुस्तक में मजदूरी में दो सेर धान पाने वाले मजदूर-वर्ग के भौतिक और नैतिक जीवन का रोमांचकारी चित्रण है। यह पुस्तक मलयालम के प्रगतिशील साहित्य-क्षेत्र की एक उत्कृष्ट रचना है। इसके लेखक हैं केरल के लोकप्रिय कथाकार श्री तकषी शिवशंकर पिल्लै।

तिरुविलांकूर के मध्यभाग का नाम कुट्टनाड है। इसी कुट्टनाड की पृष्ठभूमि में 'दो सेर धान' के कथानक का विकास हुआ है। सामान्यतः कुट्टनाड, बेम्पनाड झील में, जहाँ पम्पा नदी गिरती है, एक सौ वर्ग मील में फैला हुआ एक जल-प्रधान दलदल वाला भूभाग है। दक्षिण में यह धान की खान माना जाता है। लोगों ने अपने शरीर-श्रम से झील के उस हिस्से को पानी में मिट्टी और बालू डालकर उससे जमीन ऊपर उठाई और उसे रहने लायक बनाया। एक-एक अहाता एक-एक टापू-जैसा लगता है, जिसके चारों तरफ पानी भरा रहता है और लोग छोटी-छोटी नौकाओं के द्वारा एक-दूसरे से सम्पर्क रखते हैं।

इस भूभाग का कृषि-कार्य बड़ा कष्टसाध्य है। वहाँ पर अगहन से चैत महीने तक का समय कृषि का होता है। बरसात के बाद आठ-दस

वर्ग मील के एक-एक चकले में पानी कई फीट तक फैला रहता है। इसे एक-एक, दो-दो सौ एकड़ के टुकड़ों में विभक्त करके उनके चारों ओर आँध बाँध देते हैं। यह बाँध दो-दो, तीन-तीन फीट चौड़े होते हैं। विभाजन इस तरीके से होता है कि दो टुकड़ों के बीच एक नहर बन जाती है। धान की बुआई के पहले खेत के उन टुकड़ों में से पानी निकाल-निकालकर नहरों में भर दिया जाता है। पानी निकालने के लिए चाक (चक्र) या बिजली के इंजन से काम लिया जाता है। ऐसे खेतों को 'पुंचा-खेत' कहते हैं।

केरल में 'परया' और 'पुलया' नाम की जातियों के स्त्री-पुरुष ऐसे खेतों में काम करते हैं। यही उनका पेशा है। समाज उन्हें अछूत मानता था। खेतों के मालिक जमींदार और किसान कहलाते हैं। वे स्वयं खेतों में काम नहीं करते। परया-पुलया मज़दूर उन्हें तम्पुरान (मालिक) कहकर पुकारते हैं।

पुरानी परिपाटी के अनुसार हर परया या पुलया-परिवार एक-एक बड़े किसान या जमींदार का करारबद्ध मज़दूर हुआ करता था; और उनमें से हर एक, किसान या जमींदार का दास कहलाने में अभिमान महसूस करता था। पहले मालिक-वर्ग के लोग अपने दासों का बड़ा खयाल रखते थे और उनके सुख-दुःख में शरीक होते थे। पुराना सम्बन्ध अब नहीं रहा। अब रोज़ाना मज़दूरी पर काम लेने की प्रथा चल पड़ी है। अब जब कभी शादी-ब्याह आदि के लिए धान या रुपये-पैसे की जरूरत पड़ती है तब परया-पुलया किसी किसान या जमींदार के खेतों में एक साल तक काम करने के लिए करारबद्ध हो जाते हैं। इस करारबद्ध काम को 'ओणप्पणी' कहते हैं, और काम करने वाले को 'ओणप्पणिक्कार' कहते हैं।

ऐसे मज़दूरों को रोज़ की मज़दूरी के तौर पर दो सेर धान देने की

प्रथा है। कुशल लेखक ने परयों-पुलयों के जीवन का बहुत नज़दीक स निरीक्षण किया है और अपनी उस अनुभूति को कलात्मकता के साथ मार्मिक रूप में व्यक्त किया है।

इस कहानी के विशिष्ट वातावरण की एक झाँकी कुछ हद तक दे सकने के उद्देश्य से, मूल मलयालम ग्रन्थ में पात्रों और स्थानों के जो नाम हैं, उन्हींको इस हिन्दी-अनुवाद में व्यवहृत किया गया है। निम्नलिखित मलयालम शब्दों का भी व्यवहार किया गया है—

पुंचा-खेत (पानी से निकाला खेत), ओणप्पणि (करारबद्ध काम), ओणप्पणिक्कार (करारबद्ध मज़दूर), तम्पुरान (स्वामी) और अच्चन या अच्चा (पिता या ड़ा भाई)।

मलयालम भाषा की वर्णमाला वही है जो संस्कृत या हिन्दी की है। किन्तु उस भाषा की कुछ विशिष्ट ध्वनियों के लिए अलग अक्षर हैं। उनमें एक 'ळ' है। दूसरा हिन्दी के 'ड़' के करीब की एक ध्वनि को प्रकट करने वाला अक्षर है; जिसका शुद्ध उच्चारण जिह्वा को मूर्द्धा की तरफ ले जाकर, जहाँ से 'ष' अक्षर का उच्चारण किया जाता है वहाँ से 'र' अक्षर का उच्चारण करने से प्राप्त होता है। अंग्रेजी में इस अक्षर के लिए zha लिखने की प्रथा है और हिन्दी में 'ष' लिखकर उसके नीचे बिन्दी डालकर (ष़) काम निकालते हैं। मूल पुस्तक का नाम 'रण्टिटंड़ष़ी' है, इसी तरह लेखक के नाम के साथ जो 'तकष़ी' शब्द है, उसका उच्चारण भी वही है।

एम० जे० ट्रेनिंग स्कूल
लक्खी सराय, मुंगेर (बिहार)

भारती विद्यार्थी

दो सेर धान

एक

उस दिन एट्टिल[1] घर में लड़की को देखने के लिए फिर कोई आदमी आया। उस महीने में वह चौथा आदमी था। इस बार जो व्यक्ति आया, वह निलंपेरूर का रहने वाला था।

पहला आदमी लड़की के बाप की माँग के अनुसार धान और रुपया देने को तैयार था, लेकिन लड़की को लड़का ही पसन्द न आया।

उसके बाद आने वाले दल के लोग इसलिए रूठकर चले गए कि धान और रुपए के सम्बन्ध में लड़की के बाप की माँग प्रचलित प्रथा से बहुत अधिक थी। इस बात को लेकर दोनों पक्षों में चख-चख हो गई। लेकिन लड़के ने कहा कि वह शादी करेगा तो उसी लड़की से, अन्यथा शादी ही नहीं करेगा। उधर सुनने में आया कि उसके बाप ने कहा कि लड़के का कुँवारा रह जाना उसे मन्ज़ूर है, लेकिन उस लड़की से उसकी शादी नहीं

---

१. घर या घराने का नाम।

होगी। जब यह बात लड़की के बाप के कानों तक पहुँची, तो उसने लड़के के बाप को धिक्कारा।

तीसरा आदमी इसलिए लौट गया कि उसमें लड़की के बाप की माँग पूरी करने की सामर्थ्य ही नहीं थी। उसके बाद चौथा आया।

चिरुता[1] के लिए लोग इस तरह दौड़ते थे तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। देखने में वह सुन्दर, सुडौल और स्वस्थ लगती थी। काम भी वह खूब करती थी।

बोने, जोतने और काटने का खेती-सम्बन्धी जो भी काम हो, उसमें कोई भी दूसरी लड़की उसकी बराबरी नहीं कर पाती थी। कटाई के समय जब वह दराँत लेकर सुबह खेत में जाती, तब काट-काटकर ढेर लगा देती और शाम को ही जाकर दम लेती।

खेती के काम ही में नहीं, घर के काम-काज में भी वह बहुत सुघर थी। अतः यह समझा जाता था कि उससे जिसकी भी शादी होगी, उसके घर में कभी भुखमरी की नौबत नहीं आयगी।

चिरुता के लिए जब लड़के-पर-लड़के आने लगे, तब उसके बाप ने समझा कि उसकी बेटी की बड़ी पूछ हो रही है, उसके लिए वह जितना भी माँगे, मिल ही जायगा। इसलिए उसकी माँग और भी बढ़ने लगी।

एक और बात थी। लड़की के चले जाने से घर की हालत बिगड़ जायगी, यह सोचकर काली परयन[2] (लड़की का बाप) लड़की की शादी की बात टालता गया। कुञ्ञाली[3] (लड़की की माँ) को यह बड़ा बुरा

---

१. चिरुता=चिरुतेयी (श्री देवी)।

२. परयन (परया)=अछूतों का एक वर्ग, जो खेतों में काम करता है। बहु वचन में परयर, स्त्री लिंग—परयी।

३. कुञ्ञाली—कुञ्ञी काली (छोटी काली)।

लगता था कि जो भी व्यक्ति आता है, बूढ़ा उसे लौटा देता है। हर बार यह सोचती कि अगली बार शादी तय हो जायगी। लेकिन अगली बार भी बातचीत का कुछ परिणाम न निकलता।

जब नीलंपेरूर वाले भी रूठकर चले गए, तब कुञ्ञाली के धीरज का बाँध टूट गया। उसने कहा—"यह कैसी बात है। जो भी आते हैं, सबको लौटा देते हो। आखिर क्या विचार है आपका? लड़की क्या इसी तरह बैठी रहेगी!"

काली घर का मालिक ही था। उसने अधिकार के स्वर में कहा—"क्या करना है, यह मुझे मालूम है!"

कुञ्ञाली को गुस्सा आ गया। उसने रोष के साथ पूछा—"क्या मालूम है?"

"सुन, लड़की के लिए हिसाब करके पूरा रुपया और धान पाए बिना मैं लड़की किसी को देने वाला नहीं हूँ। जो मेरी माँग पूरी करेगा, उसीसे उसको ब्याह दूँगा। इसमें किसी को कोई घाटा थोड़े ही होगा।"

"मुझे भी कुछ कहना है, सुनो? बेटी कमा-कमाकर खिलाती रहेगी, यही सोचकर बैठे हो क्या?"

काली परयन अपनी स्त्री की बात सुनकर आपे से बाहर हो गया और उसे मारने के लिए उसने एक पीढ़ा उठाया। कुञ्ञाली पीछे हट गई। उस दिन पति-पत्नी में काफी झड़प हो गई।

काली परयन ताड़ की बनी एक थैली में दो सेर धान लेकर बाहर गया और थोड़ी देर बाद लौट आया। तब दोनों के बीच झगड़ा और भी बढ़ गया। उसे कुञ्ञाली के विरुद्ध बहुत-कुछ कहना था।

"ऐसे भी चीमान्तरा के परयर सब-के-सब दुष्ट होते हैं," काली ने सुनाया।

अपने मायके की निन्दा चुपचाप सह लेना कुञ्ञाली के लिए असह्य

हो गया, और वह बोली—"ताड़ीखाने से आकर इस तरह की बातें करोगे तो·······"

अब झगड़े ने और भी जोर पकड़ा।

चिरुता बीच में ही बोल उठी—"तुम जरा चुप नही रह सकतीं अम्मा, बाबू को जो चाहे कहने दो।"

फिर उसने दोनों को रोकते हुए कहा—"मेरी बात को लेकर तुम लोग आपस में मत झगड़ो।"

अगले दिन भी शादी का प्रस्ताव लेकर लोग आये। लड़का था, 'इट्टुकेट्टु'[1] घर के वेलुत्ता का बेटा कोरन।

कोरन तीन-चार आदमियों के साथ आया था। काली परयन बिना कहे ही समझ गया कि वे क्यों आए हैं? वह हमेशा की तरह गम्भीर होकर बैठ गया। सब लोग बिना कुछ बोले कुछ क्षण तक ऐसे ही खड़े रहे। सबसे पीछे खड़े कोरन की निगाह झोंपड़ी के भीतर की ओर गई। उसने देखा, चिरुता चूल्हे के पास से उठकर दरवाजे के पास आकर खड़ी हो गई है। कोरन को लगा, जैसे वह जरा मुस्कराई हो।

मेहमानों में से एक ने कहा—"बापा, जानते नहीं हो?"

"ओ हो, जानता हूँ, जानता हूँ।" गम्भीरता पूर्वक काली ने कहा।

किसी दूसरे ने पूछा—"क्या, माँ यहाँ नहीं है?"

"हूँ।"

"बच्ची चिरुता?"

"हूँ!"

---

१. इट्टुकेट्टु=घर का नाम।

अब काली को लगा कि मेहमानों का थोड़ा सत्कार करना जरूरी है। उसने एक-दो आसन बिछाकर कहा—"बैठो, बैठो, ऐसे खड़े क्यों हो ?"

सब बैठ गए। काली ने झोंपड़ी के भीतर की ओर नज़र दौड़ाकर पुकारा—"ओ चिरुता !"

"क्या है ?"

"पान की पोटली ले आ, बेटी !" और मेहमानों की ओर देखते हुए कहा—"यहाँ इसमें बड़ा खर्च होता है, पाँच-छः लोग प्रतिदिन लड़की को देखने आते हैं। सबको कम-से-कम पान-सुपारी तो देने ही चाहिएँ न ?"

मेहमानों में से एक ने कहा—"हमारे पास है, आप कष्ट न करें।"

चिरुता पान-सुपारी की पोटली लेकर आई। उस समय उसका चेहरा लज्जा से लाल हो रहा था। हठात् चिरुता और कोरन की आँखें चार हुईं। लेकिन किसी का ध्यान इस ओर नहीं गया।

"एं, कौन ? मौसा ? मैंने सोचा कोई और होगा।"

इस कुशल प्रश्न का जवाब मौसा के बदले कोरन ने ही दिया—"आते ही मैंने देख लिया था। अम्मा कहाँ है ?"

"अम्मा पन्तलिक्कुन्नम-घर गई है।"

थोड़ी देर बाद चिरुता ने पूछा—"मौसा जी, आप इतने कमज़ोर क्यों दिखते हैं ?"

"अकाल के दिन हैं न, बच्ची ?"

चिरुता जब भीतर चली गई तब काली परयन ने मेहमानों के साथ बातें करनी शुरू कीं। जब कोरन के साथ चिरुता की सगाई की बात सामने रखी गई, तब वह गम्भीर बन गया। और कुछ क्षण ठहरकर बोला—"मैं कहता हूँ तो झगड़ा होता है। किसी को मेरी बात अच्छी नहीं लगती।"

"क्यों बापा ?"

"बात ऐसी ही है। पूरा-पूरा पैसा लिये बगैर मैं अपनी लड़की किसी को भी नहीं दूँगा।"

एक ने कहा—"हम भी लड़की के लिए पैसे बिना दिये ही लड़की ले जाने के लिए नहीं आए।"

"वही तो मैं भी कह रहा हूँ। पहले की तरह अब लड़की नही मिलेगी।"

"आखिर कोई सीमा तो होगी पैसे लेने की ?" एक ने पूछा।

"आप लोग उसी सीमा का निर्णय करने के लिए ही आए हैं क्या ?"

कोरन को मन-ही-मन इस बात की आशंका हुई कि उसके दल के लोग काली से झगड़ा करके कहीं चल न दें। चिरुता भी उत्सुकता पूर्वक दरवाजे से सटकर खड़ी हो गई। दोनों की आँखें फिर मिलीं।

काली और कोरन का मौसा, दोनों, गरम होकर बातें करने वाले ही थे कि कोरन बोला—"आपस में गरम होने की कोई जरूरत नहीं है।" और उसने काली से पूछा—"बापा, लड़की के लिए आप कितनी रकम चाहते हैं ? जरा बताएँ तो सही।"

उसकी हिम्मत को देखकर चिरुता मन-ही-मन बड़ी प्रसन्न हुई। कोरन का यह सवाल उसे ठीक जँचा। लेकिन कोरन के मौसा को उसका इस तरह बोलना तनिक भी पसन्द नहीं आया।

वही लड़की को देखने आने वालों का मुखिया था। कोरन का लड़की के पैसे के बारे में बोलना कहाँ तक उचित था ? ऐसा अभी तक किसी ने नहीं किया था। वह बिगड़कर बोला—"तो तुम्हीं सब तय कर लो। हम, क्यों आये हैं ? हम जाते हैं।"

वह उठ गया। कोरन असमंजस में पड़ गया। उसका मौसा जाने लगा।

काली ने उन्हें सुनाकर कहा—"मेरी लड़की चाहते हो तो पच्चीस पसेरी धान और पचास रुपये देने होंगे।"

कोरन का मौसा घूमकर खड़ा हो गया।

"क्या कह रहे हो? यह कहाँ का न्याय है? जवाब नहीं दूं तो मेरा पेट दर्द करता रहेगा। बताओ तो, अपने विवाह में तुमने कितना दिया था?"

काली का जवाब तैयार था—"इस लड़की को चाहते हो तो जो माँगता हूँ, वह देना ही पड़ेगा।"

इतनी बड़ी माँग से कोरन को घबराहट हुई। उस समय भी उसकी आँखें चिरुता की ओर लगी थीं; मानो दोनों आँखों-आँखों में ही बातें कर रहे हों। उसने सोचा कि यदि वह कह दे कि माँग बहुत अधिक है, वह पूरी नहीं कर सकेगा, जरा कम करना चाहिए; तो निश्चय ही काली लड़की देने से इन्कार कर देगा। दूसरे, इस तरह खुशामद करने का उसका काम भी नहीं है। चिरुता को तो उससे भी अधिक रकम देकर ले जाने वाले मिल ही जायँगे। · · · ओह, चिरुता को पाना उसके भाग्य में नहीं है।···निराश भाव से उसने फिर चिरुता की ओर नज़र दौड़ाई। ····वह मुस्कुराई। मानो आशा दिला रही हो।

मन-ही-मन यह सोचकर कि मौसा नाराज हो तो हो, वह उसे दोषी ठहरावे, तो ठहरावे; कोरन ने कहा—"बापा, जो माँगते हो मैं दूँगा। चैत महीना समाप्त होने तक लड़की के बारे में किसी दूसरे को वचन न देना।"

"जा, निर्लज्ज जा!" उसका मौसा, जो अभी तक गया नहीं था, बोल उठा। कोरन के इस निर्लज्जतापूर्ण व्यवहार में वह भागीदार नहीं होना चाहता था। कोरन को यदि स्वयं अपने विवाह की बात तय करनी थी, तो वह उसे लाया ही क्यों था। मौसा को बड़ा अपमान मालूम हुआ।

काली परयन कोरन की शर्त मानने के लिए बिलकुल भी तैयार नहीं

था। वह सयानी लड़की को इस तरह अधिक दिन तक घर में नहीं रख सकता था।

"जो उसकी माँग पहले पूरी करेगा उसीको वह लड़की देगा।" काली ने अपना निर्णय सुना दिया।

फिर भी चिरुता की विशाल और कजरारी आँखें कोरन को यह आशा दिलाती रहीं कि चैत के महीने तक वह उसकी प्रतीक्षा में रहेगी।

दो

कोरन इसकी खबर लेता रहा कि चिरुता से शादी करने की बातें करने कौन-कौन आता है। कुछ लोग राजी होकर लौट गए हैं, पर शादी की बात पक्की नहीं हुई।

कभी-कभी उसको लगता कि चिरुता उसके पक्ष में है। कारण, वह उस दिन उसको अर्थपूर्ण दृष्टि से देखती और मुस्कुराती रही थी। उसका विश्वास था कि उसने उस दिन जो-कुछ कहा था वह चिरुता की प्रेरणा से ही कहा था। विदा होते समय भी तो उसने कुछ इशारा किया था।

लेकिन इधर एक नई तनातनी शुरू हो गई। चम्पक्कुलम के चात्तन ने कुञ्ञाली को प्रभावित कर लिया। कुञ्ञाली की इच्छा थी कि पैसा भले ही कम मिले, चिरुता की सगाई चात्तन से ही हो। लेकिन चिरुता ने चात्तन के पक्ष या विपक्ष में कुछ नहीं कहा। चात्तन प्रायः रोज ही वहाँ जाने लगा।

कोरन धर्म-संकट में पड़ गया।

पिछले चैत्र की कटाई के दिनों में वह चौबीस हजार पसेरी वाले खेत[1] की कटाई में गया था। वह और चिरुता पास-पास ही ठहरे थे। काम समाप्त होने तक दोनों ने पास-पास के खेतों में ही कटाई की थी और कटाई के बाद अपनी आँटी भी खलिहान में पास-पास ही जमा की थी।

कैसे आनन्ददायक दिन थे वे ! आपस में बातें करते-करते कटाई होती थी। चिरुता कितनी हँसोड़ थी। कुछ भी कहने पर वह हँस पड़ती। ··· डेरे में जो भी शाक-भाजी बनाती, उसे भी चखने को देती। ··· उसकी आँटियों में एक सफाई होती थी। मजदूरी भी उसको सबसे ज्यादा मिलती थी। उसकी खीसे से चात्तन ने पान लेकर भी तो खाया था।

इन्हीं दिनों कोरन ने अपने मन में निश्चय कर लिया था कि वह चिरुता से ही शादी करेगा। उसके साथ बातें करते समय बिना मुस्कुराहट के वह बात ही नहीं कर सकती थी। कोरन के सामने दिल लुभाने वाली लज्जा का भाव उसके चेहरे की शोभा बढ़ाता था। ··· उसकी गरदन में एक काला तिल है। कपोलों पर होंठों के दोनों तरफ सौन्दर्य-बिन्दु की तरह गड्ढे-जैसे चिह्न हैं। ··· उन्हीं दिनों बातें करके शादी की बात पक्की कर लेता तो कितना अच्छा होता !

उस कटाई में चात्तन भी तो आया था। अब कोरन को लगा कि उन्हीं दिनों चात्तन की दृष्टि भी चिरुता पर पड़ने लगी थी। क्या चिरुता के घर रोज-रोज जाकर वह उसे अपने वश में कर लेगा ? माँ तो उसके पक्ष में है ही। ··· चिरुता कोरन को ही चाहती है, इसका कोरन को विश्वास था। लेकिन क्या वह अपने बाप की इच्छा के विरुद्ध जा सकती है ?

पचास रुपये और पच्चीस पसेरी धान। किसी ने लड़की के लिए इतना ज्यादा धन देकर कभी शादी की हो, यह बात कभी सुनने में नहीं आई

---

१. जिसमें २४ हजार पसेरी बीज डाला जाता है।

थी। चैत्र की कटाई के बाद भी इतना इकट्ठा हो सकेगा, इसमें सन्देह ही था। यदि मान भी लें कि इकट्ठा हो जायगा, तो बाढ़ और बरसात के सावन-भादों में, जब कि खेत के मजदूरों को काम नहीं मिलता, उनकी क्या गति होगी? सारी कमाई खर्च करके शादी कर लेने से तो उसे भी भूखों रहना पड़ेगा।

किसी तरह पचास रुपये और पच्चीस पसेरी धान जमा करने पर भी ऊपर से जो खर्च पड़ेगा सो अलग। वधू के लिए कपड़े, सास-ससुर के लिए कपड़े, दो-दो भोज, करयोगम (पंचायत-संघ) का चन्दा, इस तरह क्या-क्या खर्च पड़ेगा? यह सब कहाँ से आयगा?

जैसे भी हो, इतना धन इकट्ठा करने का कोरन ने निश्चय कर लिया। किसी के यहाँ ओणप्पणी[1] में लगकर उधार लेकर कुछ करने का पहले उसका विचार नहीं था। लेकिन अब ऐसा करना अनिवार्य मालूम पड़ा। शादी करने के लिए कोई भी किसान उधार देने को तैयार हो जायगा, क्योंकि उसे काम करने के लिए एक की जगह दो-दो व्यक्ति मिल जाते हैं।

कोरन ने अपने बाप वेलुत्ता से राय ली। वेलुत्ता राजी हो गया, "तू कहीं भी जाकर उधार ले-ले बेटा! लेकिन तम्पुरान[2] से ज़रा पूछ लेना। उन्हींके दाना-पानी से तुम्हारा पोषण हुआ है। बहुत जमाने से हम उन्हीं-के दास चले आ रहे हैं।"

---

१. ओणप्पणी=करारबद्ध काम। किसान अपने काम के लिए परयन और पुलयन को धान और रुपया उधार देकर उसे एक साल के करार पर रख लेते हैं। ऐसे मजदूर को 'ओणप्पणिक्कारन' कहते हैं।

२. तम्पुरान=मालिक। राजपरिवार के लोग 'तम्पुरान' कहलाते हैं। अछूत माने वाले तथाकथित उच्च जाति के लोगों को भी 'तम्पुरान' कहते हैं।

"तो तम्पुरान से ही उधार लेना अच्छा होगा न ?"

वेलुत्ता को यह प्रस्ताव पसन्द आया। उस बूढ़े को बहुत-सी पुरानी बातें अब भी याद थीं। बहुत साल पहले जब उसने कोरन की माँ से शादी की थी तब बड़े तम्पुरान जिन्दा थे। शादी का खर्च तम्पुरान ने खुद ही उठाया था। उससे भी पहले उसके बाप की शादी का भी सारा खर्च तम्पुरान ने ही उठाया था। इस तरह पीढ़ी-दर-पीढ़ी अरक्कल तरवाट[1] और वेलुत्ता के परिवार के बीच जो सम्बन्ध चला आता था, बूढ़े ने वह सब कोरन को सुनाया। कोरन भी जब लड़की लावे, तब तम्पुरान के ही खर्च पर लावे, यही उसकी अभिलाषा थी। लेकिन अरक्कल तरवाट की वह पुरानी स्थिति अब नहीं रही कि इच्छानुसार धान और रुपये दे सकें। उन दिनों उन लोगों के पास बहुत जमीन और मकान थे। लेकिन अब तो हालत बिलकुल बदल गई थी। अब न तो वे सब मकान रहे, न जमीन। अब खेत भी वे ठेके पर लेकर आबाद करते थे, जिसके लिए बहुत मजदूरों की जरूरत नहीं पड़ती थी। फिर भी उससे पूछने के बाद ही कहीं और जगह ओणप्पणी में लगना ठीक होगा। ऐसा वेलुत्ता ने कोरन को समझाया।

कोरन अरक्कल तम्पुरान के पास गया। उसके साथ वेलुत्ता भी था। तम्पुरान ने कोरन को छूट दे दी कि कोरन जहाँ चाहे, जाकर काम में लगे। वे खुद कुछ करने में असमर्थ थे।

कोरन सोचने लगा कि उधार कहाँ मिल सकता है। किसी बड़े किसान के यहाँ इन्तजाम करा देने के लिए उसने अपने मौसा से जाकर कहा।

"उसी लड़की को लाने के लिए धान और रुपया लेना है? तब इसके

---

१. तरवाट=घर, घराना।

लिए मैं कोई सहायता नहीं कर सकता।" मौसा ने उत्तर दिया।

इस बीच चिरुता के घर में कई घटनाएं घटीं। उन सबका पता समय-समय पर कोरन को भी लगता रहता था। चिरुता के माँ-बाप आपस में झगड़ बैठे। कहते हैं, कि काली ने कुञ्ञाली को पीटा भी। रोना-पीटना सुनकर पड़ोस के लोग इकट्ठे हो गए थे।

कुञ्ञाली की इच्छा थी कि चिरुता की शादी चात्तन के साथ हो। जैसे भी हो, वह चात्तन के ही साथ शादी करायगी। उधर काली की हठ ने भी जोर पकड़ लिया। कोई कुछ भी कहे, लड़की के लिए पूरा पैसा लेकर ही वह लड़की देगा। इस मामले में वह लड़की की माँ की भी बात नहीं सुनेगा।

कुञ्ञाली ने चात्तन से कहा—"जहाँ से भी हो, धान और रुपए का इन्तजाम करो।"

चात्तन भी कहीं ओणप्पणी में लगकर उधार लेकर काम चलाने की कोशिश में लग गया। चात्तन की सब बातों का पता कोरन को रहता था और कोरन की सब कोशिशों के बारे में चात्तन भी जानता था। इस होड़ में जो भी प्रेमी धान और रुपए लेकर पहले पहुँचेगा, उसे ही लड़की मिलेगी, यही लोगों का कहना था।

लेकिन लड़की का क्या विचार है, यह किसी को भी मालूम नहीं था, किसी को भी यह जानने की आवश्यकता अनुभव नहीं हुई। माँ-बाप मिलकर विवाह का निश्चय करेंगे और वह चली जायगी। बस, इतनी ही तो बात है। चात्तन ने भी कभी यह नहीं सोचा कि लड़की स्वयं क्या चाहती है।

लेकिन कोरन को लड़की की पसन्द के बारे में ही चिन्ता लगी रहती थी। इतने कष्ट उठाकर धन और धान जमा करने के बाद भी यदि उसने उसको पसन्द न किया तो उस अवस्था में वह क्या करेगा?

उसकी इच्छा के विरुद्ध उसे जबरदस्ती इस बन्धन में क्यों बाँधता ?····न, ऐसा नहीं हो सकता कि वह उसे पसन्द ही न करे।·····लेकिन जब बाप ने माँ को पीटा, तब उसने दिल की बात क्यों नहीं कह दी। शायद वह चात्तन से ही शादी करना चाहती है। नहीं तो उसने साफ-साफ क्यों नहीं कहा ?

जो भी हो, कोरन ने धन का इन्तजाम करने में कुछ उठा नहीं रखा।

कोरन का एक मित्र कुञ्ञप्पी है। वह कैनिकरा के एक बड़े किसान के यहाँ कई सालों से काम करता आया है। वह कोरन को पुष्पवेल्लिल[1] औसेप्प (जोसफ़) के यहाँ ले गया।

पुष्पवेल्लिल का घर देखते ही कोरन को विश्वास हो गया कि वह एक धनी किसान का घर है। वहाँ पानी निकालने का एंजिन, चार-पाँच बड़ी-बड़ी नौकाएँ, चार-पाँच बड़े-बड़े धानागार, गाय-बैल, भैंस-भैंसा, सब देखकर उसे निश्चय हो गया कि वहाँ काम की कभी भी कमी नहीं होगी। उस घर के मालिक कोरन की माँग के अनुसार रुपए और धान देने के लिए तैयार हो गए।

लेकिन उनके यहाँ कुछ कड़ी शर्तें भी थीं। साल में कम-से-कम २८० दिन काम करना होगा। दिन-भर काम करने की मजदूरी दो सेर धान होगी। कटाई के दिनों में एक-एक दिन का अन्तर देकर एक-एक आँटी खर्च के लिए दी जायगी। कटाई के बाद मीड़नी[2] कर चुकने के बाद एक दशांश के हिसाब से उसका हिस्सा धान उसे मिलेगा। और किसी तरह की रियायत किसी मौके पर नहीं की जायगी। सब काम खत्म हो जाने

---

१. पुष्पवेल्लिल=घर का नाम।

२. मजदूर पांव से मीड़नी करके धान को डंठल से अलग करते हैं। केरल में बैलों से दौनी कराने की प्रथा नहीं है।

पर प्रत्येक काम करने वाले को चालीस-चालीस सेर धान और मिलेगा। उधार-कर्ज में दिया गया सब उसीमें से काटकर हिसाब किया जायगा।

कोरन किसी भी प्रकार चिरुता को प्राप्त करने की चिन्ता में था। उसने औसेप्प के नियमों को पूरा-पूरा समझने की कोशिश भी नहीं की। वह तो किसी भी नियम और शर्त को मानने के लिए तैयार था। उसने सब शर्तें मान लीं। इस तरह धान और रुपए का प्रबन्ध हो गया।

तीन

शादी हो गई। अर्थात् शादी की विधि पूरी हो गई। भोज नहीं हुआ। भोज के पहले ही लड़की को अभी साथ ले जाना है या नहीं, यह सवाल न मालूम कैसे उठ खड़ा हुआ ?

कोरन ने कहा कि उसका निश्चय साथ ले जाने का है। काली परयन ने कहा कि यह नहीं हो सकता।

"क्यों, लड़की को क्यों नहीं भेजोगे ?"

"मुहल्ले वालों को पीने के लिए और तम्पुरान को नज़र भेंट करने के लिए पैसा देने पर ही लड़की भेजी जा सकेगी।"

शादी में आये लोग दो भागों में बँट गए। एक पक्ष ने कहा, 'पैसा तो देना ही है। इसी समय क्यों न दे दिया जाय। लड़की को रोके रखना ठीक नहीं है।' दूसरे पक्ष ने काली परयन की बात का समर्थन किया। बिना बात के वाक्-युद्ध शुरू हो गया। एक आदमी ने उठकर भात के ढेर में एक लकड़ी गाड़ दी और कहा कि झगड़ा तय होने तक कोई भी

भात को हाथ न लगाये।

झगड़ा बढ़ गया। कुछ लोग मार-पीट के लिए भी तैयार हो गए।

चिरुता का दिल टूटने लगा। उसने यह कभी स्वप्न में भी न सोचा था कि उसकी शादी का उत्सव मार-पीट और खून-खराबी में परिणत हो जायगा। वहाँ आये हुए लोग या तो पिता से विरोध रखने वाले थे या पति से। झगड़ा बढ़ने से पिता या पति पर कोई आफ़त आ जाय तो? वह इस चिन्ता से व्याकुल हो उठी। ये दोनों क्यों झगड़ रहे हैं? सब-के-सब इनके दुश्मन हैं, यह बात ये दोनों क्यों नहीं समझते?······ पिता को आज नहीं तो कल वह पैसा मिल ही जायगा। पति भी अपनी हठ पर क्यों डटा है। आज ही ले जाना है। चार दिन बाद ही ले जाने से क्या नुकसान होगा?······

लेकिन दोनों पक्षों में से कोई भी दबता नहीं था। मार-पीट शुरू हो गई। तब सबकी आवाज़ के ऊपर कोरन की आवाज सुनाई पड़ी—"मैं लड़की को आज नहीं ले जाऊँगा।"

एकदम शान्ति छा गई। चिरुता की चिन्ता दूर हो गई। उसने पति की ओर देखा। तनकर खड़े होकर उसने हाथ उठाकर फिर साफ-साफ ऊँचे स्वर में कहा—"मैं लड़की को आज नहीं ले जा रहा हूँ।"

चिरुता के चेहरे पर मुस्कराहट दौड़ गई।

सब लोग कोरन की घोषणा सुनकर स्तब्ध रह गए। चारों तरफ सन्नाटा छा गया।

"यही न्याय है।" काली के मुंह से निकला। उसके पक्ष वालों ने भी हाँ-में-हाँ मिलाई।

भीड़ के भीतर से, मधुमक्खी के छत्ते में से आने वाली एक भनभनाहट की तरह आवाज उठी—"यह वर पक्ष की हार है।"

यह सुनते ही सबका रुख बदल गया।

"वर ने सबका अपमान किया है" एक ने कहा।

"ऐसा है, तो हम लोग यहाँ से चल दें।" दूसरे ने कहा।

कोरन को अब एक नये मोर्चे का सामना करना पड़ा। उसके बन्धु-बान्धव सब रूठकर बिना खाये-पिये ही जा रहे थे। अब वे सब मिलकर उसे बहिष्कृत करेंगे। यह बात चिरुता ने भी समझ ली।

काली विजयोल्लास से फूलकर बोला—"जाओ जाओ, सब-के-सब चले जाओ! मेरे दरवाज़े पर शादी-विवाह के अवसर पर झगड़ा-फिसाद नहीं होना चाहिए। तुम सब धूर्त हो। यहाँ अपना रंग मत दिखाओ!"

वधू का बाप ही वर पक्ष वालों को यह सब सुना रहा था।

सब अपना-अपना सामान उठाकर एक साथ ही चले गए। कुञ्ञाप्पी भी नहीं रुका। कोरन ने भी रुकने की प्रार्थना करने में अपने को असमर्थ पाया। दो-एक आदमी भी तो नाम के लिए ठहर जाते। कोरन का बाप भी चला गया। कुञ्ञाप्पी ने जाते हुए घूरकर केवल दो बार उधर देखा।

चिरुता ने देखा, कोरन मूर्ति की तरह निश्चल खड़ा है। उसको मन-ही-मन अपने पिता पर बड़ा गुस्सा आया। क्या सब बाप इसी तरह अपनी लड़कियों की शादी कराते हैं? एक स्नेहशील बाप का यही लक्षण है क्या? इसकी कटुता आखिरी साँस तक भी नहीं भुलाई जा सकती। बेटी की शादी में आये हुए लोगों को गाली देकर भगाया गया है!

उसका पति बेचारा खड़ा-खड़ा पानी-पानी हो रहा था। उसने उससे शादी की, मानो उसको कहीं लड़की ही नहीं मिलती।···बन्धु-बान्धव सब रूठकर चले गए।······क्या वह पुरुष अब उससे प्रेम कर सकता है? वर पक्ष का एक भी आदमी नहीं रह गया था।······

घर के चारों ओर खड़े मकई के लम्बे-लम्बे पौधों के पीछे से निकल-कर मुंह नीचा किये एक आदमी घर की ओर बढ़ा। कौन? चात्तन!! वह नहीं गया था। अकेला वही रह गया था। बाकी सब चले गए थे।

······चिरुता को अचरज हुआ। दिल में थोड़ी शान्ति भी हुई। पति के द्वारा बुलाये हुए मेहमानों में कसम खाने को कम-से-कम एक आदमी तो है। वह काफी है।

चात्तन ने कोरन के पास जाकर कहा, "सबको तुमसे जलन थी, तुम मन में दुःख मत मानो !"

कोरन ने चात्तन को गले लगा लिया। उसकी आँखों में आँसू आ गए।

चार

एक गरीब की झोंपड़ी में भी स्त्री-पुरुष के बीच प्रेम और आकर्षण बढ़ता दिखाई देता है। उनमें भी श्रृंगार-रस होता है। वहाँ भी स्त्री कनखियों से देखना जानती है और वह पुरुष को प्रेम में बाँधकर अपने ही पास रखने की शक्ति रखती है। स्त्री-पुरुष वहाँ भी प्रतिज्ञाएँ करते हैं।

चाँदनी रात में विशाल जल-राशि के ऊपर पवन की गति के अनुसार बहती हुई एक नौका दिखाई देती है। उसमें आनन्द-सागर में डूबे देवताओं की तरह दो प्राणी नज़र आते हैं। वे चिरुता और कोरन हैं।

कोरन की गोद में सिर रखकर चिरुता चित्त लेटी हुई है। उसके प्रसन्न मुख को देखते-देखते कोरन की अभिलाषाएँ कभी-कभी शब्द रूप में प्रकट होती हैं—"इस माथे पर एक बिन्दी लगाये और रेशमी चोली तथा अच्छे कपड़े पहने पूरी सजावट के साथ अगर मैं अपनी संगिनी को देख सकूँ तो········ । अच्छा, चैत मास बीतने दो।"

चिरुता की इच्छा कुछ और थी। वह चाहती थी कि कोरन एक

कुर्ता पहने और बदन पर एक चादर डाले दिन के समय आगे-आगे चले और वह उसके पीछे-पीछे। उसने भी मन में निश्चय किया कि चैत मास आने दो।

कोरन ने कहा—"एक दिन हम दोनों आलपुषा जाकर सिनेमा क्यों न देखें ?"

सिनेमा देखने की चिरुता की भी इच्छा थी। उसने कभी सिनेमा नहीं देखा था।

परस्पर प्रेम में बँधे हुए इस दम्पति की सब इच्छाएँ चोली, कुर्ता, और आलपुषा के सफ़र—इस तरह की निस्सार बातों में ही उलझकर रह जाने वाली इच्छाएँ नहीं थीं। उनको और भी ठोस काम करना था। उनका प्रेम एक चुम्बन या आलिंगन में अस्त होने वाला आवेश नहीं था।

कोरन ने पूछा—"हमें अपना ऋण भी चुकाना है न, चिरुता !"

"इसमें क्या सन्देह ? जरूर चुकाना है," चिरुता ने जवाब दिया।

उसके गाल पर हाथ फेरते हुए कोरन ने पूछा—"अच्छा पहले लड़का या लड़की ?"

वह लड़का चाहती थी।

एकाएक कोरन की प्रसन्नता कम होती-सी प्रतीत हुई। उसका चेहरा फीका पड़ गया। उसने कहा—"लेकिन क्या यह ऋण हमारे ऊपर एक अभिशाप हो जायगा ? हम तो अपना ऋण नहीं चुका रहे हैं।"

कोरन अपने बाप को कुछ नहीं देता था। जो ऋण उसे चुकाना था वह नहीं चुकाता था। लेकिन इसमें उसका कोई कसूर नहीं था।

चिरुता ने आश्वासन दिया—"रोज़ मज़दूरी का आधा सेर धान मुझे सौंप दिया करो। थोड़ा जमा होने पर एक साथ ले जाकर बापा को दे आना !"

उस गुणवती पत्नी को जो पाना था, सो उसने पा लिया। दोनों के

अधर एक गाढ़ चुम्बन की आनन्दानुभूति में मिल गए।

कोरन कुञ्जण्णी के साथ रहता है। उसके घर के एक हिस्से को टाट से घेरकर उसने अपने रहने लायक बना लिया है।

वह एक बदली का दिन था। ठण्डी हवा चल रही थी और बीच-बीच में पानी भी पड़ रहा था। खूब जाड़ा मालूम होता था।

उस दिन चिरुता ने कोरन से काम पर जाने को नहीं कहा। कोरन की इच्छा भी जाने की न थी। काम था पानी में डुबकी लगाकर मिट्टी निकालने का। ऐसी ठण्ड में आदमी बाहर ही काँपता रहता है। पानी में घुसकर काम करेगा तब क्या होगा? बिलकुल ठिठुर जायगा।

लेकिन जाये बिना कैसे काम चलेगा? दो सौ अस्सी दिन में भी कमी नहीं होनी चाहिए। चैत में साल-भर की पूरी कमाई पाने के लिए नियत काम करना जरूरी था। उस कमाई से उधार की रकम काटकर बाकी से क्या-क्या पूरा करना था। चैत के बाद ही असली जीवन शुरू होगा। अपने लोग सब रूठकर अलग हो गए थे। सहायता के लिए कोई नहीं था। पूरी ताकत लगाकर काम करने से निबाह होगा। इतना ही नहीं, काम पर नहीं जायगा तो भूखों मरना पड़ेगा।

कोरन ने पूछा—"घर में चावल या मूढ़ी कुछ है?"

चिरुता ने समझा कि घर में कुछ रहने पर काम पर न जाने के विचार से ही कोरन ने यह प्रश्न किया है।

उसने जवाब दिया—"नहीं है तो उपवास ही सही। इस ठंड में जाकर कहीं बीमार पड़ जाओ तो?"

कोरन चुप रहा।

वह आगे बोली—"आध पाव चावल और एक अधन्नी है। आज इसी

चावल और थोड़ी मरचीनी[1] खरीदने से काम चल जायगा।"

फिर भी घर में चुप बैठे रहना कोरन को अच्छा नहीं लगता था। उजाला होने के दो-तीन घंटे बाद बादलों के बीच सूरज की कुछ किरणें झाँकने लगीं।

कोरन ने कहा—"मैं ज़रा तम्पुरान के यहाँ हो आता हूँ।"

कोरन उस दिन काम पर नहीं जायगा यह बात पक्की करके चिरुता ने कोरन को जाने दिया।

करीब आधे घण्टे के बाद सूरज फिर बादलों में छिप गया और पृथ्वी पर अँधेरा छा गया। मूसलाधार वर्षा होने लगी।

चिरुता ने कुञ्ञप्पी के लड़के को भेजकर एक पैसे की मरचीनी और एक पैसे का नमक, मिर्च, मिट्टी का तेल और पान मँगा लिया। तब कञ्ञी[2] और भाजी बनाकर कोरन की बाट जोहने लगी। लेकिन कोरन नहीं लौटा।

वह काम पर चला गया होगा क्या? भैंस भी इस ठंड में पानी से भागेगी। क्या वह पानी में डुबकी लगाकर मिट्टी निकालता होगा? काम पर गया होगा तो दूसरे दिन बीमार पड़ना निश्चित है।

समय बीतता गया। कैसा जाड़ा है! समय कितना हो गया, इसका भी पता नहीं लगता। चिरुता चट्टी से अपने को ढककर लेट गई। थोड़ी देर में उसकी आँख लग गई।

उसे लगा कि कोरन ने उसे पुकारा है। वह चौंककर उठी। लेकिन कोई नहीं था। उसने बाहर निकलकर देखा। कोरन तब तक भी नहीं

---

१. एक तरह का कन्द (tapioca), जिसे प्रायः गरीब लोग काम में लाते हैं।

२. कञ्ञी—पानीदार माँड़, जिसमें थोड़ा भात का अंश रहता है।

लौटा था। शाम हो गई, ऐसा मालूम हुआ। भूख भी खूब लगी थी। कञ्जी में से थोड़ा पानी निकालकर पीने के खयाल से वह भीतर गई।

भीतर कञ्जी और सब्जी के बर्तन खाली पड़े थे। कुत्ते ने चाटा होगा, ऐसा नहीं हो सकता। उसने तो सब छीके पर हो रखा था। किसी ने बर्तन उतारकर खा लिया है।

चिरुता ने समझ लिया कि यह काम कौन कर सकता है। कुञ्जप्पी के लड़के ने इसके पहले भी एक बार रात में घुसकर चुराकर खाया था। उस दिन आवाज सुनकर उसकी नींद टूट गई थी और वह पकड़ा गया था।

चिरुता दुःख और क्रोध से भर गई। शाम को कोरन काम पर से आयगा तो वह क्या कहेगी? छाती पर हाथ रखकर वह जोर-जोर से गाली देने लगी। बाहर कुञ्जप्पी की पत्नी माणी बैठी हुई सूप बुन रही थी। उसने पूछा—"ओ, किसको गाली दे रही हो तुम?"

"देखो न, छीके पर से किसी ने कञ्जी और भाजी उतारकर खा ली है। इससे तो अच्छा होता कि वह कुत्ते का मैला ही खाता।"

वह गाली देती रही। माणी उठकर आई। उसने पूछा—"किसने लेकर खाया होगा?"

"तुम्हारे ही बेटे ने, और किसने?"

माणी ने कहा उसका बेटा ऐसा नहीं कर सकता। चिरुता को इसमें सन्देह नहीं था कि उसके बेटे ने ही हाथ साफ किया है। माणी ने इसका अर्थ यह समझा कि चिरुता ने ही खा लिया है और कोरन के आने पर उससे मार खाने के डर से यह झूठा इलजाम उसके बेटे पर लगा रही है। चिरुता इसे सहन न कर सकी। वह पेट की वैसी मुलायम नहीं थी। इसके पहले चिन्नन ने जो चोरी की थी चिरुता ने उसे सुना दिया और कहा—"फिजूल के कुत्तों-जैसे बच्चों को जन्म देना ही काफी नहीं है।

उन्हें ठीक से रखना और पालना भी चाहिए।"

"फू : जा, जा !"

"मुझे दुतकारोगी तो ! हाँ, कहे देती हूँ।"

"चल, निकल मेरे घर से !"

चिरुता हार गई। वह कहाँ जायगी, और कहीं जाकर ठहरने के लिए जगह भी नहीं है। उन्हीं लोगों की कृपा से पति-पत्नी को ठौर मिला था।

माणी अपनी जीत समझकर बोलती रही। चिरुता चुप हो गई।

जब अँधेरा होने लगा तब कोरन ठण्ड से काँपता हुआ लौटा। उस के हाथ में ताड़ की थैली में धान, मरचीनी, नमक, मिर्च आदि सब जरूरी चीजें थीं। चिरुता नाराजगी में डाटने लगेगी, इसका उसे डर था।

चिरुता भी घर में डरकर खड़ी थी। वह विवश होकर झगड़ी थी। इसके लिए अपने को कोस रही थी। गुस्से में वह इतना बोल गई, इसकी उसे क्या सजा मिलेगी ?

कोरन के घर पहुँचते ही अपराधिनी पत्नी आगे बढ़कर उसके पास पहुँच गई और बोली—"मुझसे आज एक गलती हुई है।"

कोरन को भी वही बात कहनी थी। उससे भी गलती हुई थी। चिरुता ने सारा किस्सा सुना दिया और बोली—"गुस्से में मैं क्या-क्या कह गई।"

कोरन चुपचाप खड़ा सब सुन रहा था। अन्त में फैसला सुनाया—"जाओ उसके पाँव छूकर माफी माँग लो !"

चिरुता उसके लिए तैयार नहीं थी। माणी ने भी उसे गाली सुनाई थी। इतने में पिछवाड़े से रोने की आवाज आई। अँधेरे में छिप-छिप-कर लौटे हुए चोर—चिन्नन—को माणी ने पकड़ लिया था और उसे खूब पीट रही थी।

यह सुनकर चिरुता के लिए चुप रहना असम्भव था। वह माणी और चिन्नन के बीच जा पड़ी। चिन्नन के लिए उठाया हुआ घूँसा चिरुता की पीठ पर धम से पड़ा।

इस तरह उन दोनों का झगड़ा एकदम वहीं खतम हो गया।

कोरन ने उस दिन की मजदूरी के दो सेर धान का हिसाब बताया। चिरुता धान गरम करके कूटने लगी। आग के पास बैठकर तापते-तापते कोरन ने मरचीनी कतरकर रख दिया। खाना तैयार होते होते-होते बत्ती भी बुझ गई। घास-फूँस जलाकर उसीकी रोशनी में बैठकर दोनों ने खाना खाया।

सोने के लिए जब वे लेटे, तब पत्नी ने पति से कहा—"क्या हमेशा ही इसी तरह दूसरों के यहाँ गुजारा करते रहोगे?"

"आज मैंने तम्पुरान के सामने यह बात उठाई थी। जमीन उठाकर एक झोंपड़ी बनाने की इजाजत तो मिल गई है।"

थोड़ी देर के बाद चिरुता ने पूछा—"उसके लिए समय कहाँ?"

"रोज काम पर से लौटते समय एक-एक नाव मिट्टी लाकर डाल देनी है। जमीन जब ऊँची हो जायगी तब झोंपड़ी खड़ी कर लेंगे।"

कोरन यही सोच रहा था। लेकिन तब तो चैन से पहले नए घर में नहीं रह सकेंगे।

पाँच

कोरन अपना घर बनाने के लिए पानी में से जमीन ऊँची करने में लग गया। जमीन पानी की सतह से एक बित्ता ऊपर उठ आई। पौष मास तक खेत में धान के बोने के पहले ही वह काफ़ी ऊँची उठ जानी चाहिए। चाँदनी रात में भी कोरन मिट्टी डाल-डाल कर जमीन उठाने में लगा रहता था। तम्पुरान ने कहा था कि जमीन उठानी है तो वह इतनी होनी चाहिए कि उसमें दस-पन्द्रह नारियल के पेड़ भी लगाये जा सकें।

आश्विन का महीना है। मुहूर्त देखकर खेत का बाँध बनाने का काम शुरू करना है। उस दिन किसान के सब दास इकट्ठे होते हैं और भोज होता है। उस दिन से 'पुंचा खेत'[1] के मजदूर परयन और पुलयन[2] को

---

१. पुंचा खेत--पानी में पड़ा रहने वाला खेत।

२. पुलयन--परयन की श्रेणी का खेती में काम करने वाला एक अछूत वर्ग। फर्क इतना ही है कि ऊँची कहलाने वाली जाति के लोगों से

ब्रह्मचर्य रखना पड़ता है।

उस मौके पर हर दस आदमियों के पीछे एक घड़ा ताड़ी और पाँच सेर धान की मूढ़ी मिलती है। उस दिन दसों काम करने वालों की औरतें भी हाज़िर थीं। दसों का मुखिया शमयल (सैमुअल) पुलयन सबको डालता जाता था। कोरन ने तीन गिलास पी। तब तक बाकी सब पाँच-छः तक चढ़ा चुके थे। कोरन उतने से ही तृप्त था।

चेन्नन, (जिसने सबसे ज्यादा पी थी) बोला—"यह ठीक नहीं है, एक गिलास और तुम्हें जरूर पीनी चाहिए।"

"मैं और पीऊँगा तो उल्टी हो जायगी।"

सबने एक गिलास और पीने के लिए जोर दिया। लेकिन कोरन ने इन्कार कर दिया।

तब कुञ्ञाप्पी ने कहा—"तब तो तुम्हें बाँध कर पिलाई जायगी।"

बस, फिर क्या था! चेन्नन ने कोरन का हाथ पकड़ा और कुञ्ञाप्पी ने पाँव। कोरन को आखिर विवश होकर पीनी ही पड़ी।

सब औरतें एक तरफ खड़ी-खड़ी बातों का रस ले रही थीं। वे भी एक-दो गिलास पी चुकी थीं। चिरुता ने भी पी थी।

बीच में माणी ने कहा—"चिरुता सब मिलकर तेरे परयन को पिला-पिलाकर पीने की आदत डलवा रहे हैं। इसका नतीजा तुझीको भोगना पड़ेगा। रात को पीकर आयगा और तुझे मार खानी पड़ेगी।"

दो गिलास ताड़ी चिरुता के पेट में भी काम कर रही थी। वह बोली—"ऐसा तो तुम्हीं लोगों के परयर करते हैं। मेरा परयन तो कितना भी पीकर आवे, मुंह से 'रे, तो' तक नहीं निकालता। क्योंकि मैं अपनी मरजाद

परयन को १५० फीट दूर खड़ा होना पड़ता है जब कि पुलयन को १२० फीट दूर खड़ा होना पड़ता है। बहु वचन—पुलयर। स्त्री लिंग—पुलयी।

का उल्लंघन नहीं करती ।"

माणी को लगा कि चिरुता ने उसका अपमान किया है। उसे गुस्सा आया। वह बोली—"अरी, दोष निकालती है। बाकी सब मरजाद का उल्लंघन करती हैं? तूने किस मरजाद का उल्लंघन होते देखा है ?"

कुञ्ञप्पी चिल्लाया—"ऐ माणी, तुम्हारी जीभ मुंह के भीतर चुपचाप नहीं रहेगी क्या ?"

कोरन ने चिरुता को भी बोलने से मना किया। लेकिन माणी और चिरुता का संवाद अभी खत्म नहीं हुआ था। चेन्नन और शमयल की स्त्रियाँ बीच-बिचाव करने लगीं। फिर भी दोनों के बीच वाक्-बाण चलते ही रहे।

माणी ने कहा—"लाज-शरम तो तुममें है नहीं। न आधी रात और न भोर का विचार, न दिन-दुपहरिया और साँझ का। नाव में परयन के साथ घूमती-फिरती है।"

चिरुता अपने को रोक नहीं सकी।

"जहाँ परयन और उसकी स्त्री में प्रेम रहता है, वहाँ ऐसा ही होता है।"

शमयल पुलयन की पुलयी पर ताड़ी का रंग अब खूब चढ़ गया था। उसका सिर इधर-उधर झूम रहा था। वह भर्राई हुई आवाज़ में बोली—"ओ माणी की बच्ची, जवानी में सब ऐसा ही करते हैं। हम कैसे थे?"

माणी ने कहा—"अम्मी रे अम्मी! हम तो थोड़ी लाज-शरम और परदे का खयाल भी रखती थीं।"

चिरुता को बड़ा अपमान मालूम हो रहा था। पर अब क्या जवाब दिया जाय, इस विचार से वह परेशान होने लगी। माणी का भी गुस्सा नहीं उतरा। वह आगे बोली—"यह सिंगार-पटार क्यों बढ़ता जाता है, मालूम है ?"

"क्यों ?" आँख खोलने की कोशिश करती हुई शमयल की औरत ने पूछा, "बताओ !"

"इतना ही नहीं, यह हमारे तम्पुरान को भी नुकसान पहुंचायगा। काम करना है पुंचा खेत में। धागे की तरह पतली मेढ़ ही रक्षा करती है। सत्य ही इसकी नींव है। पाक और साफ होकर न जायें तो सत्यानाश हो जायगा। तम्पुरान को इसका नतीजा भोगना पड़ेगा। खेत में पैदावार होगी तभी तो लोगों को चोरी से या किसी भी तरह कुछ मिलेगा। हमीं पर चोरी का दोष लगाने जा रही है। चिन्नन के बाप ने ही साथ में ले जाकर काम लगवा दिया था।"

शमयल की पुलयी की समझ में कुछ भी नहीं आया। उसने पूछा—"सो क्या बात है री !"

माणी ने आगे कहा—"नहीं, अम्मा, यह परयन को छोड़ती ही नहीं।"

पुलयी हँसी। अब चिरुता को बोलने का मौका मिला।

उसने कहा—"अरे रे, यह तो बड़ी अजीब बात है। तुम्हारा परयन तुम्हारे पास नहीं आता तो उसके लिए मैं ही जिम्मेवार हूं ?"

कहती हुई चिरुता माणी के पास आई और तर्जनी दिखाती हुई बोली—"ओ हो, पुंचा खेत में कैसे काम करना चाहिए, यह मुझे भी मालूम है। मैं भी तम्पुरानों की पुश्तैनी दासी हूं। इन लोगों के यहाँ भी बड़ी जमींदारी है।

इस तरह औरतें एक-दूसरे को नीचा दिखाने के लिए जब लड़ रही थीं तब उधर उनके मर्दों के बीच भी एक अलग ही विषय पर बातें हो रही थीं।

चेन्नन ने अपना एक सन्देह प्रकट किया—"अगर परयन और पुलयम नहीं रहें तो पुंचा खेत कैसे आबाद होंगे ?"

यह एक ऐसा सवाल था कि 'नहीं आबाद होंगे' यह कहने की किसी की हिम्मत नहीं हुई।

इट्याती ने कहा—"परयन और पुलयन से ही हो सकता है। दूसरे लोगों ने कोशिश की थी, पर उनसे पार नहीं लगा।"

शमयल-पुलयन ने कहा—"परयन और पुलयन के खत्म होने की स्थिति तो अभी आई नहीं है।

कोरन के ताड़ी के असर से गड़बड़ दिमाग में एक सवाल उठा—"हमारे, रहते हुए भी यदि काम न करें तो क्या होगा ?"

कुञ्ञाप्पी ने अपने झुके हुए सिर को उठाकर कहा—"भूखों रहना पड़ेगा।"

इट्याती ने उसे पूरा किया—"तम्पुरान लोग भी भूखों रहने लगेंगे।"

चेन्नन ने अपनी राय दी—"सारे देश में भुखमरी फैल जायगी।"

शमयल जोर से हँस पड़ा। ओलोम्पी का कुछ और ही खयाल था। उसने पूछा—"इस कुट्टनाट में कितनी पसेरी की जमीन होगी ?"

इस व्यर्थ के प्रश्न पर पोन्निट्टी हँस पड़ा—"देश-भर में कितनी पसेरी की ज़मीन होगी ? अरे यह किसको मालूम है ?"

ओलोम्पी ने अपने प्रश्न का अर्थ समझाया—"बात यह है कि खेतों को मोड़कर, हल चलाकर, बीज बोकर आबाद करने वाले परयन और पुलयन ही तो हैं न भाई !"

कोरन को एक और बात सूझी। उसने पूछा—"यह जमीन, जिसमें सब तम्पुरान लोग अपने-अपने घर बनाये हुए हैं, परयन ने ही तो मिट्टी डाल-डालकर पानी से ऊपर उठाई है ?"

शमयल पुलयन ने अपने-अपने बचपन की एक कहानी सुनाई। उन दिनों वहाँ आठ-दस ही घर थे। लेकिन आज आठ सौ क्या, एक हजार से भी अधिक हैं। यह सब परयन-पुलयन की ही मेहनत का फल था।

कुञ्ञाप्पी धीरे से बोला—"धन और धान उन्हींका खर्च हुआ था न ?"

"उनके पास धन और धान आया कहाँ से ?" कोरन ने प्रश्न किया।

"उन्होंने खेत जोत-बोकर पाया।"

"किसने जोता-बोया ? परयन-पुलयन ने ही तो जोता-बोया है। धान पैदा हुआ और तम्पुरानों ने अपने धानागार भर दिए। परयन और पुलयन ने ही अपनी मेहनत से मिट्टी भर-भरकर पानी में से जमीन उठाई, उसमें नारियल के पेड़ लगाये। पर नारियल तोड़कर ले जाते हैं तम्पुरान लोग।"

इट्याती ने इस बात की सचाई का समर्थन किया।

शमयल को फिर पुरानी बातें याद आने लगीं। उसने उन दिनों के बड़े-बड़े खेत-मालिकों के नाम सुनाए। वे अब मर मिटे थे। लेकिन वे सब सचाई और ईमानदारी पर चलने वाले थे।

उसने कहा—"धान जमा करने और बेचने के लिए वे खेती नहीं कराते थे। धान आदमी को खाने के लिए था।"

इस तरह उन सबकी बातचीत पुराने जमाने की खेती से लेकर आजकल की खेती तक पहुँची। आजकल छोटे-छोटे किसान सब नष्ट होते जा रहे हैं। शमयल ने यह मान लिया।

ओलोम्पी ने इस बात को और भी साफ किया—"छोटा किसान बटाई पर खेत लेता है। ठीक समय पर वह बुवाई नहीं कर पाता। उसके लिए पास में पैसा चाहिए न ? पैसा रहता नहीं। कर्ज लेता है। कटनी-मीड़नी समाप्त होते-होते खेत के मालिक का आदमी परा[1] लेकर

---

१. परा—अनाज तोलने के बदले नापा जाता है। एक पसेरी के नपने को 'परा' कहते है। एक सेर के नाप को 'इटङ पी' और एक पाव के नाप को एक 'ना.पी' कहा जाता है।

हाजिर हो जाता है और थोड़ी-बहुत जो पैदावार होती है उसमें से मालिक का हिस्सा उठा ले जाता है। बाकी जो बचता है उसमें से जिससे कर्ज लिया होता है उसे देता है। आखिर में उसके पास बचता ही क्या है? फिर कर्ज लेता है। तब भी भुखमरी से बचाव नहीं होता।"

पोन्निट्टी ने कहा—"यह बात ठीक है। चार-पाँच तम्पुरानों के अतिरिक्त बाकी सबका यही हाल है। इन छोटे तम्पुरानों की हालत हम मजदूरों से भी कहीं अधिक गई-बीती है।"

कुन्नाप्पी ने कहा—"हे भगवान्, ऐसे तम्पुरानों का दास बनने से हमें बचाना।"

इतने में पुण्पवेल्ली औसेप्प वहाँ आ पहुँचा और कहा—"चलो, चलो, समय हो गया!"

औरतों और मर्दों की बातचीत बन्द हो गई। सब लोग नावों में बैठकर औसेप्प के साथ काम पर चल पड़े।

दूसरे दिन सवेरे चिरुता की गोद में सिर रखकर माणी सवेरे की धूप में लेटी थी। चिरुता माणी के बालों से जूँ निकाल-निकालकर मार रही थी।

औरत-मर्द, सभी पिछले दिन की बात को भूल गए थे।

छः

खेतों में जोरों से काम करने का समय है। कुट्टनाट में काम के मारे जीवन त्रस्त हो रहा है। सब लोग एक तरह की जल्दी में हैं। लोगों का आना-जाना सब एक ही उद्देश्य से प्रेरित है। सब जगह काम हो रहा है।

औसेप्प की छः हजार पसेरी की जमीन[1] छः खेतों में बँटी है। हर खेत में काम हो रहा है। तीन हजार पसेरी के एक खेत-समूह में झील के किनारे छः सौ पसेरी का एक टुकड़ा औसेप्प का था।

सब खेतों के चारों ओर का बाँध ठीक करने का काम खतम हो गया। लेकिन औसेप्प का छः सौ पसेरी वाले टुकड़े का बाँध अभी बँधना भी शुरू नहीं हुआ था। खेतों से पानी निकालने की मशीन लगा दी गई थी।

एक दिन काम के बाद कोरन नाव पर घर लौट रहा था। शाम

---

१. जिसमें छः हजार पसेरी बीज डाला जाता है।

का अँधेरा हुए दो-ढाई घंटे हो गए थ। उसके सामने से एक नौका में दो आदमी विपरीत दिशा में जा रहे थे। उनमें से एक ने दूसरे से पूछा—"यह क्या ? इस खेत में इंजिन लगाने के बाद भी चकबन्दी का काम नहीं हुआ।"

"यह बाँध एक बड़े किसान का है। इसलिए इसमें समय पर कुछ होता नहीं," दूसरे ने जवाब दिया।

"पुण्पवेली औसेप्प के दास कौन-कौन हैं ?"

दूसरे ने शमयल, कुञ्ञाप्पी आदि का नाम लिया और कहा कि इनमें से कोई भी अपनी जिम्मेवारी नहीं समझता। नहीं तो यह बाँध बिना बँधे ऐसे नहीं पड़ा रहता। अब यह कब बनेगा ?

कोरन को यह बात बहुत अखरी। कुट्टनाट का कोई भी किसान-मजदूर इसे सहन नहीं कर सकता था।

उसके मन में आया कि नाव को रुकवाकर जवाब दे, 'उनको एक ही जगह पर नहीं, छः-छः जगह काम करना पड़ता है। रात-दिन वे काम करते रहते हैं।' इस तरह का जवाब उसके मन में उठा। लेकिन उसे यह जवाब मुनासिब नहीं मालूम हुआ।

उस रात को कोरन को नींद नहीं आई। पुण्पवेली औसेप्प के दासों के विरुद्ध की गई शिकायत उसे अपमानजनक ही लगी।

ओणप्पणी में शामिल होकर काम करने का उसका यह पहला ही अवसर था। अब तक वह जिनको जरूरत थी उनके यहाँ दैनिक मजदूरी पर काम करता था। ओणप्पणी में सम्मिलित होने के बाद वह मजदूर से दास की स्थिति में आ गया। उसको क्या करना था यह पूर्व निश्चित बात हो गई। कल कौन बुलाएगा, कैसा काम करना होगा आदि की फिक्र करने की अब जरूरत नहीं रही। अब इस पर निश्चित जिम्मेवारियाँ हैं। काम भी अब रोज की मजदूरी के लिए नहीं करना पड़ता। अब तो वह देश

के लिए जरूरी अन्न उपजाने के लिए काम करता है, देशवासियों को अन्न देने के लिए··· जिस खेत में वह काम करता है उसकी पैदावार किसी भी दूसरे खेत से अधिक होनी चाहिए।

इस तरह कुट्टनाट के परयों और पुलयों की होड़ की भावना राज्य-भर का अकाल दूर करने में सहायक सिद्ध हुई।

ऐसे विचारों के पैदा हो जाने पर कोरन को नींद कैसे आती ? उसको मिलाकर जितने काम करने वाले हैं उन सबमें जिम्मेवारी की भावना नहीं है। यही बात कही न। इसे यदि मुखिया सुनता तो ?

कोरन उठा और उसने कुञ्ञाप्पी को पुकारा। वह भी नहीं सोया था। कोरन ने जो सुना था उसे कुञ्ञाप्पी को सुनाया। कुञ्ञाप्पी को भी कुछ कहना था। इन्हीं खेतों में एक खेत के मालिक किसान ने उसे भी कुछ सुनाया था। कोरन सोच रहा था कि बाँध का न बँधना तम्पुरान के लिए अपमानजनक है।

कुञ्ञाप्पी ने कहा—"हाँ, हाँ, तुम तो अभी नये हो न ? मुखिया को कोई तमीज या अक्ल हो तभी तो काम हो सकता है। उसे कुछ समझ-बूझ तो है नहीं। पीछे जाकर पहाड़ उठाने लगेगा। लेकिन इस तरह का कोई तम्पुरान खोजने पर भी नहीं मिलेगा। चैत मास में बनि-हारी नापते समय देखना चाहिए। एक मुट्ठी धान भी हमारे बर्तन में नहीं आने देगा। नापने का काम ऐसे ढंग से होगा कि सब तम्पुरान के ही हिस्से में चला जायगा। हम लोगों की बनिहारी नापते समय सब लोग नापने वाले को मन-ही-मन शाप देते हैं। एक बार पान खाने के लिए भी तो एक मुट्ठी उनके सामने लेना असम्भव है।"

कोरन ने कहा—"वह बाँध ठीक करने का काम हम कल ही क्यों न शुरू कर दें ?"

कुञ्ञाप्पी राजी हो गया।

खूब सबेरे औसेप्प के सब दास, मुखिया के घर पर इकट्ठे हुए। कोरन ने कहा कि काम किसी व्यवस्था के अनुसार होना चाहिए। कुञ्ञप्पी ने समर्थन किया और कहा कि ऐसा करने से खेती ठीक तरह हो सकती है। शमयल की राय भी भिन्न नहीं थी। कोरन का एक और विचार था। खेती करनी थी छः खेतों में। यद्यपि सबको मिलकर सब खेतों में काम करना था, तो भी हरेक को एक-एक हिस्से की जिम्मेवारी सौंप देना अच्छा होगा। जिससे प्रत्येक व्यक्ति अपने हिस्से की पूरी चौकसी रखकर काम सँभाले।

शमयल इससे सहमत था। उसने कहा—"तो अभी यह तय हो जाय।"

चेन्नन, जो इस बातचीत में भाग लिये बिना चादर ओढ़े एक नारियल के पेड़ के नीचे बैठा था, बोला—"मै इस तरह की कोई जिम्मेवारी अपने ऊपर लेने को तैयार नहीं हूँ।"

थोड़ी देर तक किसी ने कुछ भी नहीं कहा। तब कोरन ने पूछा—"ऐसा क्यों? तुम भी पुष्पवेली के दास हो न?"

चेन्नन थोड़ी देर मौन रहकर बोला—"ऐ छोकरे, मैं अभी-अभी दास नहीं बना हूँ। बाप-दादों से लेकर हम पुष्पवेली के ओणप्पणिक्कार हैं। इसलिए मैंने कहा कि मुझसे ऐसा नहीं हो सकता।"

यह बात कोरन की समझ में नहीं आई। "पीढ़ियों से दास होने से यह अधिक महत्त्व की बात है न कि जिम्मेवारी से काम सँभाला जाय," कोरन ने कहा।

"पुंचा-खेत की पैदावार परयन और पुलयन की मेहनत पर ही निर्भर है। जब हम अपना काम ठीक तरह नहीं करते तभी देश में अकाल पड़ता है।"

चेन्नन ने हँसते हुए कहा—"हाँ, हाँ, नई बीबी छप्पर पर भी झाड़ू लगाती है।"

सबको लगा कि यदि बातचीत का यही सिलसिला जारी रहा तो कोरन और चेन्नन में अवश्य अनबन हो जायगी। ऐसा न होने देने के लिए शमयल ने एक-एक खेत एक-एक को सौंप दिया। और नदी के किनारे वाले छः सौ पसेरी वाले खेत की जिम्मेवारी कोरन को सौंप दी।

चेन्नन के लिए कोई खेत नहीं रखा गया। बंटवारे के बारे में उसकी सम्मति भी नहीं ली गई। उसकी उपस्थिति पर भी लोगों ने ध्यान नहीं दिया।

चेन्नन जरा तनकर बैठ गया। पर्वत की हवा ने मानो उसे जगाकर सशक्त बना दिया। उसने हिसाब पूछने का निश्चय किया।

"शमयलच्चा, तुमने यह क्या किया है?"

"क्या है रे!"

"क्यों, तुम भी दूसरों की तरह हो गए। आरुपरे-परयर (आरुपरा घराने के परयर) पुप्पवेली के ही दास हैं न? कहीं से बहकर नहीं आये हैं।"

शमयल ने कहा—"यह मैं जानता हूँ।"

"तब तुम इस तरह नहीं करते। ऐं, मेरे तम्पुरान की खेती है। इधर-उधर से आये लोगों को तुमने खेत की जिम्मेवारी सौंप दी और मुझे भुला दिया। हम भी तो पुप्पवेली का ही नमक खाते हैं।"

"तुम्हींने कहा था न कि मुझसे नहीं होगा।"

"ऐसे तो मैं कभी-कभी तम्पुरान से भी झगड़ पड़ता हूँ। कभी-कभी काम पर भी नहीं जाता। तम्पुरान कभी-कभी मार भी देते हैं। साल में कम-से-कम दो बार मैं मार खाता हूँ। यह तुम जानते ही हो। लेकिन तम्पुरान के खेत में फसल पैदा करने का काम मेरा ही है।"

"तो जो खेत तुम्हें पसन्द आए, ले लो!"

चेन्नन पुष्पवेली और अपने घर के बारे में फिर सुनाने लगा। पुष्पवेली के लोग एक समय बहुत बड़े धनी थे। फिर इनका सब-कुछ बरबाद हो गया। उसके बाद उनकी हालत सुधरी और फिर गिरी। अब फिर सुधर रही है। पुष्पवेली के साथ यह चढ़ाव-उतार सब सहते हुए उनकी सेवा में रहकर उसके बाप-दादों ने गुजारा किया है। अकाल में भी वे पुष्पवेली के साथ रहे और अभिवृद्धि में भी भाग लिया। बचपन में अपने दादा को उसने उस समय के तम्पुरान को डाँटते भी देखा है। उस चेन्नन को कोई अलग कर सकता है? अलग करने पर भी वह अलग होगा क्या?

उसी दिन छः सौ पसेरी वाले खेत का बाँध बाँधने का काम शुरू करने का निश्चय हो गया। लेकिन चेन्नन अपना हक और अधिकार प्रकट किये बिना नहीं रह सका। उसने कहा—"मैं आज बाँध बाँधने के लिए नहीं आ सकता।"

शमयन ने पूछा—"क्यों?"

"मुझसे यह नहीं होगा। जाकर तम्पुरान से कह देना।"

चेन्नन को विश्वास था कि पुराने सम्बन्ध के कारण तम्पुरान के साथ उसे कुछ आजादी है। उस आजादी को उसे अपने साथियों पर प्रकट करना था।

सात

चेन्नन अवश्य अपराधी है। ऐसे अवसर पर काम पर न जाना अत्यन्त अनुचित था। तम्पुरान के साथ आजादी भले ही हो, पर यह ठीक नहीं था। यह कुट्टनाट के पुलयन के योग्य नहीं था। मजदूरी न मिले, आमदनी न हो, फिर भी उसका कर्तव्य धान उपजाकर खलिहान में पहुँचा देना है। यह परम्परा से चली आने वाली व्यवस्था है।

फिर भी उसे पीटकर उसका पैर तोड़ देना, उसकी झोंपड़ी तोड़-ताड़कर गिरा देना न्याय-संगत नहीं कहा जा सकता। उसका सत्यानाश कर दिया गया है। घड़े-मटके आदि भी तोड़ डाले गए हैं। उसके बच्चों को भी पीटा गया है। बड़ी लड़की छोटे बच्चे को लेकर पानी में कूद पड़ी; तब भी, कहा जाता है, उस पर मार पड़ी! छः ही महीने के बच्चे के साथ उसने डुबकी लगा ली, लेकिन बच्चे को नहीं छोड़ा। सुनने में आता है कि पैर टूट जाने से गिर पड़ने पर भी चेन्नन पर मार पड़ी!

तम्पुरान का इस प्रकार इन्सानियत खो बैठना और निर्दयता दिखाना

कोरन को असह्य मालूम हुआ । उस घटना के बारे में सुनकर वह काँप उठा । यही उसका तम्पुरान है, जिसका वह काम करता है । अमीरी और गरीबी दोनों में हमेशा साथ देने वाले थे ये आरुपरा परयर ! चेन्नन कितने अभिमान से वर्णन कर रहा था ! उसने कहा था, तम्पुरान के खेत में अन्न उपजाने का काम उसका है ।......उसका विश्वास था कि वह स्वयं कुछ भी करे, तम्पुरान सब सहेंगे ! सहने के लिए तम्पुरान उसके ऋण में बँधे हैं ।

चारों और भागे हुए उस घर के सब आदमी रात तक भी इकट्ठे हुए होंगे क्या ?......क्या चेन्नन उसी अवस्था में पड़ा होगा ?

कोरन को लगा कि पुष्पवेली के लोगों में बाप-दादों के जमाने से चले आने वाले वात्सल्य की बात बिलकुल झूठ है । उनमें वात्सल्य नाम-मात्र के लिए भी नहीं है । अज्ञान में पड़े सचाई के प्रतिरूप इन बेचारे परयों ने तम्पुरान के लिए सब-कुछ अर्पित करके उनके निर्मम ढोंग का विश्वास किया था ।......अब चेन्नन क्या सोचता होगा ? और उसके स्वर्गीय बाप-दादे !......सम्भव है उन परयों की आत्माएँ, जो अपने तम्पुरान के लिए जन्मे, जिये और मरे, आज पैर टूटे हुए चेन्नन के चारों ओर मँडराती होंगी ! उन लोगों की सारी सेवाएँ व्यर्थ हो गईं ?

कोरन ने कुञ्ञप्पी से कहा—"एक दृष्टि से देखा जाय तो हमारा सारा परिश्रम व्यर्थ है ।"

"क्यों रे ?"

"ऐसा ही है । हम जी तोड़कर काम करें तो भी कोई लाभ नहीं । हम सब मूर्ख हैं । मैं अरवकल का दास हूँ, पुष्पवेली का ओणप्पणिक्कारन हूँ, मेरा तम्पुरान अमीर है, हमारे खेत में सबसे ज्यादा फसल हुई—हम ऐसा भाव रख सकते हैं और कह भी सकते हैं । लेकिन कोई फायदा नहीं ।"

कुञ्ञप्पी ने मतलब की हँसी हँस दी; मानो कोरन अबोध बच्चा है। कुञ्ञप्पी को भी कुछ कहना था। वह बोला—"एक परयन को तम्पुरान ने चार-पाँच थप्पड़ मार दिए। उसके लिए इतना क्या सोचना और कहना है? तुम्हारे-जैसे छोकरों को क्या मालूम? तम्पुरान ने दासों को मार तक डाला है और लाश को पत्थर से बाँधकर नदी में फेंक दिया है। उनका यह अधिकार है।"

कोरन—"अच्छा, यह उनका अधिकार है? यह कैसा अधिकार है जी?"

कुञ्ञप्पी ने जवाब दिया—"सुनो, तुम्हें लगता होगा कि मिट्टी और कीचड़ में खड़े-खड़े बुआई करने और पानी में डुबकी मार-मारकर बाँध बाँधने आदि में हम इतना कष्ट क्यों सहते हैं। लेकिन तुम बिना समझे इसमें दुःख मत मानो मेरे भाई! कष्ट है, यह तो ठीक है। लेकिन परयन और पुलयन का जन्म यों ही नहीं मिलता। पिछले जन्म के सत्कर्मों के फल-स्वरूप ही पुलयन का जन्म मिलता है। जरा यह तो सोचो, देश-भर के लोगों के लिए अन्न उपजाने का काम कौन करता है? परयन और पुलयन ही तो। तुम कहते हो कि क्या फायदा।"

कोरन के मन में यह तत्त्व-ज्ञान न घुसा। वह कुछ और ही सोच रहा था, 'पीढ़ियों से सेवा में लगे हुए विश्वस्त परयों के बेटे को मार-पीटकर मालिक ने जब उसका पैर तोड़ दिया तब कुछ गलती हो जाने पर कल के आए कोरन का वे क्या करेंगे?'

कुञ्ञप्पी ने आगे कहा—"अगले जन्म में हमारी भलाई होगी। हाँ, एक बात है। चेन्नन को कुछ अधिक दण्ड मिल गया। इतना नहीं होना चाहिए था। सुनो बच्चे, पुराने जमाने के मालिक अब नहीं रहे। वे इस तरह कभी मार देते थे तो खुद भी रोते, खुद सेवा भी करते थे। वे दासों को अपने घर के अंग-जैसा ही मानते थे।"

"एक बच्चे के जन्म पर और प्रसव, नामकरण, विवाह आदि का सब खर्च वे ही लोग उठाते थे। उन दिनों तम्पुरान ने यदि किसी को पीटा तो उसका भाग्य ही चमक उठता था। पर अब तो हालत सब बदल गई है।"

कोरन जानता था कि वे सब बातें बहुत अंश में सच हैं। जब उसके दादा की मृत्यु हुई थी तब उसके तम्पुरान के ही घर से क्रिया-कर्म का सारा खर्च हुआ था। अरक्कल के बड़े तम्पुरान ने लाठी के सहारे खड़े होकर सब कर्म विधिपूर्वक कराया था। जब लाश दफनाई जा रही थी तब बेचारे बूढ़े तम्पुरान रो पड़े थे।

यह सब ठीक है। पुराने जमाने में कुट्टनाट के किसानों और पुलयन के बीच एक हार्दिक सम्बन्ध था। उन दिनों वे एक संयुक्त परिवार के अंग-जैसे थे।

कुञ्जप्पी ने फिर आगे कहा—"उन दिनों मालिक लोग जंघा के नीचे ही मारते थे। मारते समय अगर गलती से कहीं और जगह चोट लग जाती तो दास के परिवार की वे खुद देख-भाल करते थे।"

कुञ्जप्पी पुरानी स्थिति को विस्तार से सुनाने लगा—"पहले की स्थिति कैसी थी, मालूम है? सुनो, बाढ़ के दिनों में बिना काम के घर में जब बैठना पड़ता था तब वे उधार के नाम पर धान देते थे। फिर सावन की अमावस्या, ज्येष्ठ में होने वाले चम्पक्कुलम के मूलम[1] उत्सव और ओणम[2]

१. मूलम नक्षत्र के दिन का उत्सव, जिसमें क्रीड़ा होती है।

२. ओणम केरल का सबसे बड़ा त्योहार है जो भद्रकाल के राजा महाबली, जिन्होंने अपने राज्य की सारी भूमि वामनावतार विष्णु को दान में दे दी, वर्ष में एक बार अपनी प्रजा को देखने आते हैं। उनके स्वागत के उपलक्ष में लोग खूब खाते-खिलाते हैं और अछूतों को नये वस्त्र देते हैं, जिससे महाबली उन्हें देखकर प्रसन्न हों।

तथा मकम[१] आदि त्योहारों के अवसर पर विशेष तौर पर इनाम देते थे। रोज की मजदूरी उन दिनों सवा दो सेर रहती थी। दोपहर को कञ्जी[२] भी देते थे। कटाई शुरू होने पर काम करने वाले की आमदनी कितनी होती थी, यह भी सुनोगे क्या ?"

कोरन ने कहा—"पुरानी बातें सुनने से अब क्या मिलेगा ? फिर भी सुनाओ ! मैं सब सुनना चाहता हूँ।"

कुञ्जप्पी को एक-एक करके सब बातें याद आ रही थीं। उसे उनकी स्मृति-मात्र से आनन्द आ रहा था। धीरे-धीरे वह भावावेश में आ गया और बोला—"खेत की उपज से हक के तौर पर मजूरों के लिए कितना अनाज मिला करता था। ताड़ी पीने के लिए आँटी, रोज-खर्च के लिए आँटी, अलावा बच्चे-कच्चे हों तो 'उनका चुना हुआ' कहकर जितना वे उठा लें, सब मिल जाता था।"

"एक बात छूट गई। बुआई में डाला गया बीज और मारितोर्प मिलाकर पाँच पसेरी बीज और मिलता था। इतनी आमदनी होती थी। लेकिन उन दिनों खेती का लक्ष्य मालिक की अमीरी न होकर मालिक और दास का निर्वाह करना होता था। लेकिन आज ? तुम जानते ही हो। धान उपजाते हैं हम, पर तम्पुरान हम लोगों को मजदूरी में धान न देकर, बेच देते हैं। उन दिनों तम्पुरान लोग हमारी औरतों को आँख उठाकर देखते तक नहीं थे। लेकिन आज छोटे तम्पुरान लोग हमारी जवान लड़कियों के पीछे पड़े रहते हैं।"

कुञ्जप्पी के लम्बे विवरण और तुलना ने कोरन की विचार-शक्ति

---

१. आश्विन मास में मकम् नक्षत्र के दिन ओणम-जैसा ही एक छोटा उत्सव मनाया जाता है।

२. पतली माँड, जिसमें भात का थोड़ा अंश मिला रहता है।

को जागृत कर दिया । सब ठीक है । लेकिन तम्पुरान और दासों के आपस के सम्बन्ध को इकरारनामे द्वारा निश्चित करने पर भी इस ज़माने में यदि तम्पुरान दासों को मारते हैं, मज़दूरी ठीक तरह नहीं देते और छोटे तम्पुरान उसकी औरतों के पीछे पड़े रहते हैं, तो क्या करना चाहिए ?

आठ

पुष्पवेली औसेप्प के सब खेतों में से पानी निकालकर बुआई कर दी गई। दासों के बीच इस बात को लेकर बहस होने लगी कि किसके खेत की बुआई अधिक अच्छी हुई है। आपस में हाथा-पाई तक हो गई।

कुञ्ञाप्पी की शिकायत थी कि उसका खेत अच्छे मुहूर्त में नहीं बोया गया। इट्याती की शिकायत थी कि उसके खेत का बीज अच्छा नहीं था। कहा जाता है कि वह तम्पुरान से खिसिया भी गया। अच्छा बीज नहीं है तो खेती ही नहीं करनी चाहिए। जब जड़ ही अच्छी नहीं होगी तब फसल कैसे अच्छी हो सकती है?

शुरू होने पर कुट्टनाट के तम्पुरान लोग इस तरह की फटकार चुप-चाप सुन लिया करते हैं।

पहले का पानी निकाल देने पर यह पता चल गया कि कौन-कौन खेत अच्छे हैं और कौन कमज़ोर। सब खेतों में कोरन की कृषि को ही मुखिया ने सबसे बढ़िया बतलाया।

कोरन के लिए वह एक उत्सव-जैसा दिन था। एक खेत की पूरी जिम्मेवारी अपने ऊपर लेकर काम करने का उसके लिए वह पहला ही अवसर था। खेती का अनुभव रखने वाले पुराने अनुभवी लोगों के रहते हुए भी उसे पहला स्थान मिल गया। उस दिन उसने ताड़ी पी, भरपेट पी। उस दिन आधी रात को उस खेत के एक दूर के कोने से एक गीत की आवाज निकली और चारों ओर फैल गई। अगल-बगल के रखवालों ने भी उसे दुहराया।

उस खेत के बीच की मेंड़ पर से अपनी काँख में थैली दबाए जब वह ओणप्पणिक्कारन जाता था तब धान के पौधों के पत्ते हवा में झल-झल करके एक मर्मर ध्वनि निकालते थे, मानो वे उसे पहचानते हों।

कोरन दूसरे रखवालों को भी उपदेश देने लगा। क्योंकि यह अब प्रकट हो गया कि उसे भी खेती का मर्म मालूम है। कितनी भी भयंकर बाढ़ हो, न टूटने वाला बाँध बाँधने, ढाल देखकर नाला बनाने, अंकुर देखकर धान की अच्छाई का अन्दाज लगाने, धान की खराबी पहचानकर उसका कारण समझने आदि-जैसी बहुत-सी बातें उसे मालूम हैं।

कोरन के साथियों को उससे ईर्ष्या होने लगी। पोन्निट्टी को मालूम है कि उसका खेत क्यों खराब हो गया। बुआई के बाद पानी निकालने में दो दिन की देर कर दी थी। जिस दिन खेत सुखाया गया उस दिन पानी भी पड़ा। खेत में खारी मिट्टी निकली। यह सब उसकी गलती नहीं थी।

पोन्निट्टी तम्पुरान के घर पहुँचा। उसीने उस दिन औसेप्प को जगाया। उससे पूछा—"मेरी क्या उम्र होगी, तम्रा[1] ?"

"क्या बात है रे ? बता !"

"बड़े तम्रा के समय से ही मैं काम करने वाला हूँ न ?"

---

१. तम्रा='तम्पुरान'।

"इसलिए ?"

पोन्निट्टी ने दुःखभरे दिल से कहा—"मुझे अब तक इतना अपमान नहीं सहना पड़ा था।"

पोन्निट्टी ने अपनी शिकायत सुनाई। उसने अब तक अच्छा काम करने वालों में अपना नाम बनाए रखा था। इस साल उसे कभी न मिटने वाला अपमान सहना पड़ रहा है। उसीका खेत सबसे खराब निकला है। इसके लिए तम्पुरान ही जिम्मेवार हैं। उन्होंने जान-बूझकर उसके साथ अन्याय किया है।

औसेप्प अपनी हँसी नहीं रोक सके।

पोन्निट्टी ने आगे कहा—"कहीं से एक छोटा छोकरा आया, मालिक ने जरूरत के मुताबिक उसकी मदद की। उसका खेत पहले दर्जे का निकला। बाप-दादे के समय से काम करने वाले हम सब ही नालायक निकले।"

औसेप्प की समझ में बात आ गई। पोन्निट्टी को दुःख उसके खेत में अच्छी फसल न होने के कारण है। उन्होंने पूछा—"इसके लिए अब क्या करना चाहता है ?"

"खेत में डालने के लिए गोबर और राख चाहिए।"

औसेप्प ने मान लिया। लेकिन पोन्निट्टी के चले जाने पर कोरन आया। उसकी भी एक प्रार्थना थी। उसके खेत में थोड़ी और खाद डाली जाय तो फसल अधिक अच्छी होगी। औसेप्प ने यह भी मान लिया। इस तरह पुष्पवेली औसेप्प की कृषि दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई। खेत समय पर धूप और पानी पाकर खाद के कारण हरे-भरे होकर लहलहाने लगे।

बुआई शुरू हुई।

औरतें उस हरियाली के बीच खड़ी होकर पंक्ति में बुआई का काम

करती हैं। गाना भी चलता है और उसकी ताल के अनुसार बुआई का काम भी। जब एक छन्द समाप्त होता तब सबका हाथ एक साथ उठता और एक साथ फिर बुआई में लगता।

एक साथ मिलकर काम करने वालों को उस काम में एक विशेष आनन्द आता है और एक शक्ति का भी अनुभव होता है। उन गीतों से नसों में खून दौड़ने लगता है। उसकी ध्वनि हृदय को हिला देती है। गाने की गति जैसे-जैसे तीव्र होती जाती है, ताल भी वैसे-ही-वैसे तीव्र होती जाती है और काम भी साथ-साथ उतनी ही तेजी से होने लगता है।

कोरन ने उस दिन भी पी थी, भरपेट पी थी। गाने वाली चिरुता थी। उसके मधुर कण्ठ से गान-माधुरी निकल पड़ी। बाकी सबने उसे दुहराया। गीत का विषय एक अज्ञात कवि की लिखी एक प्रेम-कहानी थी। एक परयन की एक परयी से प्रेम करने की कहानी थी। बीच-बीच में कोरन भी उसके पास जाकर ताल देकर साथ-साथ गाने लगता। उस गाने में एक ऐसा स्थल था जहाँ पति-पत्नी एक-दूसरे को देखते हुए बातें करते हैं। उसमें नायिका कुछ पूछती है और नायक जवाब देता है। इस तरह काम करने वाले अपने को भूलकर दोपहर की कड़ाके की धूप का अनुभव किये बिना काम करते रहे।

तम्पुरान का बेटा चाक्को वहाँ पहुँच गया। काम करने वालों को यह मालूम नहीं हुआ। वे गाते हुए काम में मस्त थे।

एकाएक कोरन का गाना रुक गया। वह काँप उठा। चाक्को चिरुता के पीछे खड़ा था। कोरन को कुञ्ञाप्पी की उस दिन की बात याद आ गई। उसके कान में वे शब्द गूँज उठे, "छोटे मालिक लोग लड़कियों के पीछे पड़े रहते हैं।"

कोरन ने कहा—"ऐ छोटे मालिक, उधर क्यों खड़े हैं? ऊपर आइए!"

चाक्को वहाँ से चला गया। औरतें उस समय भी गाती हुई बुआई के काम में लगी थीं। कोरन ने नहीं गाया। उसका उत्साह एकदम ठण्डा पड़ गया। ताड़ी की मस्ती भी उस समय तक समाप्त हो चुकी थी। धीरे-धीरे उसको थकावट मालूम होने लगी।

नौ

कोरन के खेत में धान खूब अच्छा होकर बढ़ रहा है। औसेप्प के दूसरे खेतों में भी फसल अच्छी है। लेकिन सबसे अच्छी कोरन की है।

एक रात को चिरुता बैठकर कोरन को खिला रही थी। वह आज एक छोटा लड़का नहीं है, पूर्ण पौरुष-प्राप्त एक परयन है।

कोरन को उस दिन की भाजी बहुत अच्छी लगी। वह बैठकर मन से खा रहा था। पति को आनन्द से खाते देखकर चिरुता खुशी से और भी परोसती जाती थी।

"थोड़ा भात और परोसूँ ?"

"हुँ"

"कितने दिन हुए बैठकर ठीक तरह से पेट-भर खाए ? अब बाँध पर ही बराबर खाना-पीना होता है।"

चिरुता ने थोड़ा भात तथा भाजी और परोस दी। कोरन ने कहा—"ऐसे काम का फल भी तो खेत में देखने को मिल जाता है।"

चिरुता ने कुछ नहीं कहा। लेकिन उसकी चुप्पी ध्यान खींचने वाली थी। लगता था कि उसे बहुत-कुछ कहना है।

कोरन ने पूछा—"तुम ऐसा नहीं मानतीं क्या ?"

"कौन-सी बात ?"

"जो मैंने कही ?"

"ओ !"

"क्यों, 'ओ' के क्या मानी ?"

चिरुता को लगा कि उसने जो कहा, कोरन को अच्छा नहीं लगा। उसने कहा—"मैंने तो कुछ कहा ही नहीं !"

"न, तुम कुछ नहीं बोलतीं। खेत की बात होती है तो तुम बिलकुल चुप हो जाती हो। हँसती भी रहती हो तो उस समय तुम्हारी हँसी गायब हो जाती है और तुम गम्भीर बन जाती हो। यही देखा करता हूँ।"

चिरुता को जो-कुछ कहना था उसने उसके हृदय में उथल-पुथल मचा रखी थी। लेकिन क्या वह कहने योग्य है ? पति को अच्छा लगेगा ? अब तक उसके मुंह से पति के अहित का एक भी शब्द नहीं निकला था। कहने के लिए तो बहुत-कुछ है। अब वह मन में दबकर रहेगा भी नहीं। इस समय भी वह दबाने की कोशिश में थी।

दो बार उसने पति के भाव को ताड़ने के लिए उसकी ओर देखा—"जब मैं कहती हूँ तब शिकायत होती है। इस तरह 'खेत, खेत' सोचकर जी-तोड़ काम करने से क्या होगा ? आज कितने दिन के बाद घर आना हुआ है ? न ठीक से खाते हो, न आराम करते हो। इस तरह काम करने से यदि कहीं बीमार पड़ गए तो क्या होगा ? मैंने भी ओणप्पणि बकार देखे हैं। बाप रे बाप, कहीं भी ऐसा नहीं होता। एक बार देखने के लिए भी जी तरसकर रह जाता है। अभी भी हाथ धोना है तो बाँध पर जाकर ही हाथ धोओगे।"

कोरन सब समझ गया । बोला—"ठीक है, तुम जो कहती हो सो सब ठीक ही है । लेकिन तुम उस खेत को जाकर एक बार देख लो ! धान देखकर वहाँ से आने का मन नहीं करेगा ।"

"धान खेत में अपने-आप बढ़ेगा ।"

"तुमसे क्या कहूँ । तुम पुंचा-खेत में काम किये हुए परयन की लड़की नहीं हो । इसीलिए इस तरह कहती हो । खेत में धान उपजाने का काम परयों का ही है ।"

चिरुता भी ज़रा खिसियाई । उसके बाप ने भी ओणप्पणिक्कारन होकर पुंचा-खेत में काम किया है । वह भी एक बड़े घराने का दास है ।

चिरुता के स्वाभिमान को धक्का लगा । उसने कहा—"ओ ! पुंचा-खेत और उसमें का काम मैंने भी देखा है । हम भी एक बड़े घराने के दास हैं । बुआई के बाद काम करने वालों को हमेशा खेत में पड़े रहने की कोई जरूरत नहीं है । पुंचा-खेत में काम करना जिनको मालूम नहीं है वे ही इस तरह वहाँ पड़े रहते हैं ।"

कोरन को गुस्सा आ गया । उसने कहा—"तो क्या, बीज डालने के बाद घर पर आकर तुम्हारे साथ पड़ा रहूँ ?"

"यही मैंने कहा ? इतनी तकलीफ उठाकर काम में लगे रहने मे कहीं बीमार पड़ जाओगे तो उस समय सहायता के लिए कोई नही आयगा । उस समय मैं ही पास में रहूँगी ।"

"पुंचा-खेत में परयन बाँध पर रहता है तो उसका प्रभाव ही विशेष होता है । उस समय धान की विशेष वृद्धि होती है ।"

चिरुता को कुछ और भी कहना था । वह सोचती रही, "खैर इस तरह काम करते रहने से फायदा क्या है ?"

"क्यों, ऐसा क्यों कहती हो ?"

"धान होने पर सब तम्पुरान ही तो ले जायँगे । यही सोचते हो कि

वे हमारे मालिक हैं ?"

कोरन को थोड़ी देर के लिए जवाब नहीं सूझा कि खेत के घने धान की वृद्धि के बीच भी एक खयाल उसके मन को चिन्तित बना दिया करता था।

धान उपजाना दासों का काम है। खेत में धान होता ही है। तम्पुरान के साथ का सम्बन्ध एक आठ आने वाले कागज पर लिखकर निश्चित किया हुआ है। वे उसके मालिक हैं। क्या मालिक दास को कभी अपना समझ सकता है ?"

चिरुता के कहने के अनुसार यदि चार दिन वह बीमार पड़ जाय तो ? जिन्दगी का क्या ठिकाना ?…जैसा उसने कहा है, खेत में कितना भी धान हो, उससे क्या फायदा ? उस इकरारनामे के अनुसार उसे जितना पाने का अधिकार है उतना ही तो मिलेगा।

फिर भी उस खेत की रखवाली का काम तो उसीका था। उसीने उसमें धान बोया और बढ़ाया है। उस हरे-भरे खेत को देखते ही वह बाकी सब-कुछ भूल जाता है। वह एक परयन है न !

चिरुता को कुछ ठीक जवाब न दे सकने के कारण वह असमंजस में पड़ा था।

चिरुता ने आगे कहा—"मैं कहती हूँ मुझे ये सब तम्पुरान अच्छे नहीं लगते। ये सब बड़े स्वार्थी और लालची होते हैं।"

कोरन इस कथन को भी नहीं काट सका।

वह फिर बोली—"मेह के पानी से जमीन उठा-उठाकर उस पर झोंपड़ी बनानी है ?"

"नहीं तो फिर कहाँ जायँगे ?"

"इस साल की कमाई लेकर हम इसे छोड़कर यहाँ से कहीं चले जायँ तो क्या हर्ज ?"

"कहाँ ?"

"कहीं भी ।"

पर कोरन को यह मंजूर नहीं था। कहीं जाने पर भी तो एक नये तम्पुरान से ही सम्बन्ध जोड़ना पड़ेगा। उससे अच्छा एक साल का परिचित तम्पुरान ही है। इतना ही नहीं, वह पीढ़ियों में बड़ा किसान भी है। उसके अधीन कई दास हैं। वह भी उन्हींका दास रहे तो हर्ज क्या है ? कोरन ने कहा—"सुनो, इसी तरह सब दास बनते हैं। और कुछ नहीं तो उनके पास चार-पाँच हजार की खेती तो है।"

"जो भी हो, मुझे पसन्द नहीं हैं। बड़े तम्पुरान से तो किसी तरह निभ सकेगा। लेकिन जब उनके बेटे का समय आयगा तब यह काम हमें नहीं चाहिए। उसके पहले ही हमें हट जाना चाहिए।"

चिरुता की वाणी मे एक डर का आभास मिलता था। वह किस कारण था, यह नहीं कहा जा सकता। कोरन के दिल में एक चिन्ता पैदा हो गई।

"क्यों री, छोटे तम्पुरान खराब हैं क्या ?"

"उनका घूरने का ढंग, चाल-व्यवहार ; सब खोटेपन से भरा रहता है। वे खराब ही मालूम पड़ते हैं।"

दूर से आने वाला घोर गर्जन सुनाई पड़ा। कोरन दौड़कर बाहर गया। लोग चिल्ला रहे थे, "बाढ़ आ गई, बाढ़ आ गई।"

कोरन के ही खेत का बाँध टूटा था। बाँध टूटकर पचास फुट दूर चला गया था। रात-दिन पचास-साठ मजदूरों की लगातार कोशिश के बाद वह बाँध फिर किसी तरह बाँधा जा सका। उस दिन समुद्र में जोरों का ज्वार उठा था।

उसी दिन से पानी निकालने के चार इञ्जिन लगाकर खेत में से पानी निकाला जाने लगा। दो दिन में खेत ठीक हो जायगा, ऐसा निश्चय हो गया। धान दो दिन पानी में डूबा रहे तो अच्छा ही होगा। ऐसी कृषि-विशेषज्ञों की राय थी।

फिर भी रखवाले की गलती पकड़ी जायगी। बाँध टूट गया। यह उसीकी लापरवाही से हुआ न? इससे भी बढ़कर, तम्पुरान पर ज्यादा खर्च जो पड़ गया। फसल बढ़िया होने से खर्च काटकर भी एक अच्छी रकम आमदनी में मिलेगी सही। तो भी दास की गलती निकालने के लिए यह एक अच्छा मौका हाथ लगा।

तीन-चार दिन तक ढूँढने के बाद ही औसेप्प कोरन से मिल सके। बाँध के टूटते समय वह खेत में नहीं था। उसका उस समय किसी और जगह जाना उसकी गैर-जिम्मेवारी को प्रकट करता है, उन्होंने ऐसी शिकायत की।

कोरन बाहर नहीं निकलता था। उन दिनों साथियों ने तम्पुरान से बचकर रहने की राय दी। गुस्से में न जाने क्या कर बैठें। एक सप्ताह बाद जब धान फिर ठीक दीखने लगेगा तब मिलना ठीक होगा।

कोरन को बाहर निकलने में लज्जा अनुभव होती थी। उसके ऊपर एक बड़ा भारी लांछन लग गया था। बाँध गिरने का कोई उचित कारण था। पुंचा-खेत की पवित्रता मिथ्या नहीं है। वह घर जाकर अशुद्ध होकर बाँध पर गया था। इसीसे बाँध टूट गया।

एक बूढ़ी परयी ने कहा—"जवान ही तो है दोनों!"

दस

एक दिन सवेरे मंदिर और गिरजों में हर्षसूचक घंटी बजनी शुरू हुई। कुछ खास बात थी। पूछने पर पता चला कि बालिगों को मताधिकार मिलने की खुशी मनाई जा रही है।

पुलयों और परयों को अब मालूम हुआ कि रियासत-भर में तम्पुरान लोग सभाएँ क्यों करते थे और झण्डा लेकर कनार में जुलूस क्यों निकालते थे, और क्यों कई बड़े तम्पुरान लोग जेल गए थे। कहीं-कहीं लोग पीटे गए थे और गोली से भी घायल हुए थे। यह सब उन दिनों सुना था। सब इसीके लिए था।

कोरन को एक बात कहनी थी। पिछले 'वोट' के अवसर पर (तब सबको वोट देने का हक़ नहीं था) उसने वोट देने वालों को अपने अरक्कल-तम्पुरान के कथनानुसार नावों में चढ़ाकर विद्यालय में पहुँचाया था। कुञ्ञाप्पी ने भी ऐसा ही किया था। कोरन ने कहा—"उस दिन बड़ा मजा आया। पौ फटते ही नाव पर चढ़ा था। काफी चाहो तो काफी,

ताड़ी माँगने पर ताड़ी, खाने के समय खाना, सब मिला। शाम को तम्पुरान ने यह कहते हुए कि 'तुम्हें भी वोट का हक मिलना चाहिए' दस रुपये ऊपर से दे दिए। उस समय मेरे तम्पुरान ही जीते।"

कुञ्ञाप्पी ने कहा—"वोट के एक महीना पहले से ही मेरे तम्पुरान के घर में ताड़ी और मांस खूब चलता था। मुर्गी और बत्तख काटने का काम मैं ही करता था। मेरे तम्पुरान ही जीते।"

तब शमयल ने कहा—"रे, वोट देने वालों को पैसा भी खूब मिला था।"

वह भी सच माना गया। कोरन ने अपने अनुभव की एक बात सुनाई।

लेकिन सबको बराबर-बराबर नहीं दिया गया था। कुछ को एक रुपया, कुछ को दो से दस रुपए तक दिये गए। हमारे घर के पास एक तम्पुरान के घर में चार लोगों के वोट थे। मेरे मालिक ने मुलाई करके पन्द्रह रुपया तय किया और अन्त में पच्चीस दिये। मुझे भी इनाम मिला।"

किसी विचार में पड़े हुए शमयल ने पूछा—"तब तो हम लोगों को इस बार भी पैसा मिलेगा?"

"हाँ, जरूर मिलेगा।"

"ऐसा है तो अच्छा ही है।"

आसमान को गुँजाने वाले तेज बारूद के विस्फोट[१] की आवाज़ से सारा वायु-मण्डल गूँजने लगा। तम्पुरानों ने अपने-अपने दासों के घरों में जाकर खबर दी कि उस दिन खुशी मनानी चाहिए।

उस दिन नौकाओं में जल-विहार का कार्य-क्रम रखा गया। सोलह बड़ी और कई छोटी नौकाएँ सजाने का निश्चय हुआ। परये और पुलये सब अच्छे सफ़ेद कपड़े पहनकर इस नौका-विहार में सम्मिलित हुए।

---

१. दक्षिण भारत में उत्सव मनाने के अवसरों पर आतिशबाजी और डायनामाइट का इस्तेमाल होता है

दोपहर के बाद नौका-विहार शुरू हुआ। नौकाओं पर तिरंगा झंडा फहराया गया था।

कुञ्ञाप्पी ने कोरन से पूछा—"यह कैसा झण्डा है रे ?"

कोरन को मालूम नहीं था। पहले तम्पुरान लोग जब सभाएँ करते थे तब उसने इस तरह का झण्डा देखा था।

"ईसाइयों का झण्डा है क्या ?"

"तब तो उसमें सूली (क्रास) का चिह्न जरूर होता।"

"मन्दिर का झण्डा है क्या ?"

"छी: !"

"गोरों का झण्डा ऐसा नहीं होता। होता है क्या ?"

"नहीं, लेकिन यह देखने में अच्छा लगता है।"

बाहर से आने वालों ने नाव चलाते समय जो गाना शुरू किया था उसे वे दुहरा नहीं सके। सब नावों पर एक ही गाना। आपस में होड़ की कोई बात नहीं। गाना बिलकुल नया। उसी तरह 'आर्पुविली'[1] की जगह पर 'जय' शब्द का प्रयोग। आज तक नौका-विहार में कभी 'जय' शब्द का प्रयोग नहीं सुना था।

नौका-विहार के बाद गिरजे के सामने के मैदान में सभा हुई। कई तम्पुरानों के भाषण हुए। बहुत भीड़ लगी थी। परये और पुलये उस दिन पहले-पहल तम्पुरानों के साथ एक सभा में बैठे।

बड़े जोशीले भाषण हुए। वह बड़ा गौरवपूर्ण दिन था। देश ने

---

१. आर्पु विली—एक तरह की हर्ष-ध्वनि खुशी मनाने के अवसरों पर पुरुष लोग एक खास आवाज में चिल्ला उठते हैं। उसे 'आर्पुविली' कहते हैं। औरतें भी इस अवसर पर मंगल-सूचक ध्वनि मुँह से निकालती हैं, जिसे 'वाकिल्ला' कहते हैं।

कितना महान् कष्ट सहा और त्याग किया है, आदि बहुत-सी बातें कही गईं।

सभा विसर्जित हुई। सब परये और पुलय इकट्ठे हुए। उन व्याख्यानों के बारे में उनकी बातें होने लगीं।

कुञ्ञाप्पी ने पूछा—"उस तम्पुरान ने कहा 'सब बराबर हैं' यह कैसे हो सकता है कोरन ? हम और तम्पुरान सब बराबर हैं ?"

इट्याती उस दिन की मेहनत के बाद ऊँघ रहा था। यह सुनकर वह बोल उठा—"सभा में बोलने वाले सब ऐसा ही कहते हैं। एक बार मैंने एक तम्पुरान को यह कहते हुए सुना था कि 'तम्पुरान और परयों'—दोनों का खून एक ही-जैसा है।' मौके-मौके पर ये लोग ऐसा ही कहा करते हैं।"

कोरन ने जवाब दिया—"यह सब ठीक है," लेकिन आज तो लोगों ने बिलकुल नई बातें कहीं। हमको अब वोट मिल गया है। तब तो बात ठीक ही होगी।"

कुञ्ञाप्पी ने कहा—"उस बड़े तम्पुरान ने दीवान तम्पुरान (रियासत के दीवान) के बारे में जो-कुछ कहा था वह सुना था न ?"

"उस समय उनको बहुत गुस्सा आ गया था।"

एक-दूसरे को एक उचित सन्देह हुआ, "आगे हमीं लोग अपना काम सँभालेंगे ?"

एक ने कहा—"तो क्या राजा की जरूरत नहीं होगी ?"

"नहीं होगी।"

"तब तो मार-पीट और डकैती का राज्य हो जायगा। आज राजा के रहने पर भी जब किसी को चैन नहीं है, जब राजा ही नहीं रहेगा तब क्या हाल होगा ? पुलिस-उलिस कुछ नहीं रहेगी ?"

"क्या जानें ? इस उलट-फेर के बारे में मुझे कुछ नहीं मालूम।"

कोरन ने कहा—"मुझे एक दूसरी बात पर अचरज होता है। वे कहते

हैं कि वे सबकी बात पर ध्यान देंगे। यह कैसे हो सकता है ? हमें मजदूरी ज्यादा मिलनी चाहिए, यह बात कहने से क्या सरकार तम्पुरानों से हमें ज्यादा दिलायगी ?"

शमयल को यह सुनकर हँसी आई कि कैसी बेवकूफी की बात कर रहा है।

"अरे, तुम क्या कह रहे हो ? मजदूरी सरकार क्यों दिलायगी ? इसमें सरकार का क्या काम है ? मजदूरी तम्पुरानों से हमको खुद लेनी है।"

सबको शमयल का कहना ठीक जँचा। सरकार का यह काम नहीं है। इन बातों में सरकार हाथ नहीं डालेगी।

कोरन का चेहरा जरा उतर गया। सचमुच जैसा दूसरों ने कहा, 'इसमें सरकार का क्या काम है ?' फिर भी उसने छोड़ा नहीं। उसने कहा—"सरकार को हमें उचित मजदूरी दिलवानी चाहिए, यही मेरा कहना है।"

तब एक युवक ने कहा—"एक तम्पुरान ने यह भी कहा था। वे एक छोटी उम्र के तम्पुरान थे। मुझे उनका भाषण ही सबसे अधिक पसन्द आया।"

शमयल ने अविश्वास प्रकट करते हुए कहा—"तुम लोग पागल हो गए हो क्या ? सरकार हमारी बातों पर ध्यान नहीं देगी। सरकार को इससे कोई मतलब नहीं है। भाषण देने वाले वे सब तो अब तम्पुरान के घर में बैठकर भोज उड़ाते होंगे।"

"उड़ाने दो बाबा, धान रातों-रात पाँच रुपये पसेरी जो बेचते हैं।"

"अरे यह बात नहीं है। मेरे कहने का मतलब यह है कि ये भाषण देने वाले सब, तम्पुरानों से पैसा लेकर फिर ऐसी बातें नहीं कहेंगे। वे उनकी इच्छा के अनुसार ही काम करेंगे।"

ऊँघाई के बीच से इट्याती फिर बोला—"ये लोग ताड़ीखाना बन्द करने जा रहे हैं।"

शमयल घबरा गया।

"भूखे-प्यासे लौटते समय एक शाम का काम चल जाता था। अब वह भी नहीं हो सकेगा क्या?"

"ऐसा ही लगता है।"

एक युवक के मन में उस दिन के भाषणों की एक बात उठी। उसने पूछा—"एक वक्ता ने कहा कि नायर-तम्पुरानों और मापिला-तम्पुरानों (नायर-हिन्दू और ईसाई-मालिकों) के बीच का झगड़ा खत्म हो गया? इन लोगों में पहले कोई झगड़ा था क्या?"

कोरन को भी भाषण सुनते समय यह सन्देह हुआ था। उसने भी वही प्रश्न दुहराया।

शमयल ने उत्तर दिया—"सब फिजूल की बातें हैं, बच्चे! सब बेकार! खेत और जमीन लिख देते समय और खेत आबाद करने का इकरारनामा लिखते समय बड़ी तनातनी और झगड़ा हुआ करता है। वह भी अमीरों के बीच ही। देखो, उस दक्खिनी बाग के जो माथु (मैथ्यू) और मातु (माधव) तम्पुरान हैं उन दोनों में कितना स्नेह-भाव है? गरीब नायरों और गरीब ईसाइयों के बीच कोई झगड़ा नहीं है।"

इट्याती ने यह मान लिया। झगड़ा धनवानों के बीच ही होता है। लेकिन अपने वर्ग की सामान्य भलाई की बात जब आती है तब सबमें आपस में खूब मेल रहता है। सिर्फ 'माथु' और 'मातु' ही नहीं, औसेप्प और गोविन्दन नायर, ऐप्पु (आइप) और किट्टपिल्लै (कृष्ण पिल्लै), ऐसे कई लोगों के नाम भी इट्याती ने सुनाये। ये सब कभी अलग न होने वाले मित्र हैं।

कोरन सब ध्यान से सुन रहा था। उसने अब अपनी राय प्रकट

की—"यह सब झूठ है, सफ़ेद झूठ। मैं कहता हूँ, नायर ईसाई को गाली देता है और ईसाई नायर को, लेकिन असल में दो ही वर्ग हैं—एक धनिकों का, दूसरा धनहीनों का। उस दिन एक ईसाई तम्पुरान को ही न, हमारे तम्पुरान ने पुलिस की सहायता से घर से निकाल दिया था, क्योंकि उन्हें अपने कर्ज का पैसा वापिस नहीं मिला था। सो जहाँ धन और धान की बात आती है वहाँ जाति के कारण कोई अन्तर नहीं पड़ता।"

एक दूसरे युवक को कुछ और कहना था, "यद्यपि इस प्रदेश में गरीब नायर और ईसाई आपस में स्नेह भाव से रहते हैं, फिर भी हमारे साथ वे अमीर तम्पुरानों-जैसा ही व्यवहार करते हैं। इतना ही अन्तर है कि हम लोगों में भुखमरी नहीं है, पर वे उपासे ही दिन बिताते हैं। वास्तव में कोरच्चा[1] के कथनानुसार जातियाँ दो ही हैं।"

मध्य वर्ग के लोगों के सम्बन्ध की इस चर्चा ने शमयल के दिमाग को जगाया। उस तरह के पचासों घरों की हालत उसे मालूम थी। उन सबके पास रहने के लिए अपने-अपने घर थे। लेकिन कर्ज ले-लेकर और बटाई पर खेती करके वे सब-कुछ खो बैठे हैं। अपनी बात शमयल ने यह कहकर समाप्त की कि, "अब वे सब उपासे ही जीवन बिताते हैं; जैसा इट्याती ने कहा है। तम्पुरान लोग हैं न? स्वयं काम कैसे करेंगे? इसलिए उपास-ही-उपास।"

इस तरह उनकी बातचीत चलती रही।

---

१. कोरन भाई।

ग्यारह

शीघ्र ही सब बातों पर विचार करने के लिए पुण्यत्रेली के घर में एक सभा हुई। दूर-दूर से मुख्य-मुख्य ईसाई महानुभाव पहुँचे। कुट्टनाट के दोनों गिरजों के पादरियों के अलावा अन्य तीन-चार माटों के पादरी भी इस सभा में शामिल होने के लिए आये।

किस विषय पर चर्चा हुई, यह परया और पुलया लोगों को साफ-साफ नहीं मालूम हुआ। फिर भी उन्होंने कुछ अनुमान किया। कोरन ने कहा—"वोट के बारे में होगी। हम लोगों को भी पहले ही से कुछ सोच लेना चाहिए।"

उस प्रदेश के एक नायर प्रभु[1] के घर में भी एक सभा में सलाह-मशविरा हुआ है, ऐसा सुनने में आया है। मालूम होता है कि उसमें नायर, ईषवा और ब्राह्मण, सब शामिल थे। तीन-चार संन्यासी भी थे।

---

१. प्रभु=एक प्रतिष्ठित धनी आदमी।

कोई बड़ी बात होने जा रही है, ऐसा लगता था। डर लगा कि हिन्दुओं और ईसाइयों के बीच एक झगड़ा ही हो जायगा।

कुछ ही दिनों के बाद तीन-चार ईसाई पादरी उधर आ पहुँचे। गिरजे में उनके भाषण हुए। प्रमुख ईसाई-घरों में भी वे गए। फिर वहाँ के ईसाई नेताओं के साथ वे पुलयों और परयों की झोंपड़ियों में आते-जाते दिखाई देने लगे। कुछ गरीबों को उन्होंने पैसे दिये, कुछ को कपड़े दिये।...इस तरह वे परयों और पुलयों के सहायक बन गए।

एक सप्ताह के बाद एक दिन शाम को कुञ्ञाप्पी ने कोरन से कहा—"मैं तो ईसाई बनने जा रहा हूँ।"

यह सुनकर चिरुता आश्चर्य से स्तब्ध हो गई।

"यह कैसा तमाशा है जी!"

कुञ्ञाप्पी ने कहा—"क्यों री, हम लोगों के भगवान् नहीं हैं न? लेकिन हम भी तो मनुष्य हैं। मरने पर हमें भी कोई रास्ता चाहिए न?"

यह कुञ्ञाप्पी एकदम बदल गया है। उन लोगों के बीच सबसे बुद्धू माना जाने वाला कुञ्ञाप्पी आज मरने के बाद की बातें कर रहा है। कोरन को भी अचरज हुआ।

चिरुता ने पूछा—"तब जो ईसाई नहीं बनते उनके लिए कोई रास्ता नहीं है?"

"हम तो माटन (एक क्षुद्र देवता) की पूजा करने वाले हैं न? उस पादरी की बातें सुननी चाहिएँ।"

कुञ्ञाप्पी की समझ में जितना आया था, उसने कह सुनाया और आगे जोड़ा—"ये पादरी बड़े ज्ञानी हैं। मैं, इट्यार्ती, ओलोम्पी और पोन्निट्टी, सब वहाँ थे।"

कोरन ने पूछा—"वे सब भी ईसाई बनने जा रहे हैं?"

इट्यार्ती और मैंने तो यह निश्चय कर लिया है। तम्पुरान ने

तो तुमसे भी कहने को कहा है। पादरी ने हमारी झोंपड़ी को नया बनवा देने का वचन दिया है। इट्टयाती के लिए भी वे एक नई झोंपड़ी बनवा देंगे। आज मुझे दो रुपए मिले हैं।"

चिरुता ने कहा—"हम ईसाई नहीं बनेंगे। हम घर में 'काली' और 'माटन' की पूजा करने वाले हैं।"

कुञ्ञप्पी ने कहा—"मैं भी वैसा ही हूँ। अब तम्पुरान ने कहा है कि ईसाई बन जाने से हम और तम्पुरान एक ही जाति के हो जायँगे।"

कोरन हँस पड़ा, "शमयलच्चन तो बचपन में ही ईसाई बना था, लेकिन वह आज भी पुलयन ही है।"

कुञ्ञप्पी के पास इसका कोई जवाब नहीं था। उसने अपना निश्चय एक बार और दुहराया।

"मैं तो ईसाई ही बनूँगा।"

कोरन ने गम्भीरता के साथ कुञ्ञप्पी से कहा—"आज परयों और पुलयों में वे इतनी दिलचस्पी क्यों ले रहे हैं? मैं तुम्हें बता दूँगा। अब सबको 'वोट' का अधिकार मिला है। इसी सिलसिले में किसी बात के लिए है।"

चिरुता ने अपना निश्चय दुहराया।

अगले रविवार को कुञ्ञप्पी और उसके घर वालों का 'ज्ञान-स्नान' (बपतिस्मा) हुआ। कुञ्ञप्पी का नाम 'पत्रोस' हो गया, और माणी 'मरिया' हो गई।

इस तरह जब मत-परिवर्तन कराकर ईसाई बनाने का काम इधर चल रहा था तब मानत्तु-घर वालों के मठम (बाहरी घर) में एक प्रमुख संन्यासी आसन जमाकर ईसाई बने हुए परयों और पुलयों को शुद्धि-कर्म द्वारा फिर हिन्दू बना रहे थे। कुञ्ञप्पी पत्रोस हो गया तो मोहन्नन (जौन) अनन्तन हो गया। ईसाई और हिन्दू बनाने की इस व्यग्रता का

मतलब परया या पुलया किसी की भी समझ में नहीं आया। इस होड़ में कुट्टनाट के परया और पुलया मानो दो खिलाड़ियों के बीच में गेंद की तरह इधर-से उधर फेंके जा रहे थे। लेकिन, उस समय भी उनकी रोज की मजदूरी दो सेर धान ही बनी रही।

इस नई व्यवस्था ने राष्ट्र के जीवन को एक नई दिशा की ओर परिचालित कर दिया। जब परयों और पुलयों में किसी विशेष उद्देश्य से धर्म-परिवर्तन का काम जोरों से चल रहा था, तब बड़े-बड़े किसानों, जमींदारों और पूँजीपतियों को उनके सामान्य हित ने एक राष्ट्रीय संगठन में शामिल होने को प्रेरित किया। उस संगठन का नाम था 'स्टेट-कांग्रेस'।

गांधी टोपी वाले कार्यकर्ता सब जगह घूमने लगे। पुन्नवेली और मानत्तु-घर वाले, सब उन लोगों को सब प्रकार की सहायता देते थे। पादरी और संन्यासी, दोनों लोगों को उपदेश देते थे।

एक दिन रविवार को गिरजे की प्रार्थना के बाद लोगों के तितर-बितर होने से पहले ही विकारी अच्चन[1] ने 'मेमने के बच्चों'[2] को संबोधित करके कहा—"सब लोग स्टेट-कांग्रेस में शामिल हो जायें।"

मकर संक्रान्ति के दिन आश्रम में इकट्ठे हिन्दुओं को स्वामी जी ने भी यही उपदेश दिया। एन० एस० एस० करयोगम[3] और एस० एन० डी० पी० योगम[4] की सभाओं में भी ऐसे ही निर्देश घोषित किये गए।

---

१. विकारी अच्चन=गिरजे का मुख्य पुरोहित।

२. मेमने के बच्चे=ईसा मसीह के अनुयायी।

३. एन० एस० एस० करयोगम=नायर सर्विस सोसायटी संघ।

४. एस० एन० डी० पी० योगम=नारायण गैर धर्म परिपालक संघ।

यह नहीं भूलना चाहिए कि स्टेट-कांग्रेस ने ही सबको वोट का अधिकार दिलाया है। दक्खिन के बगान के माथु (ईसाई) और उत्तर के मातु (हिन्दू) रात को खाने के बाद जब मिले तब दोनों को एक ही विषय पर बातें करनी थीं। वे ऐसी बातें करने लगे जिनके बारे में उन्होंने न तो पहले कभी सोचा था, और न जिन्दगी में उनकी कभी जरूरत ही समझी थी।

मातु ने पूछा—"तुम कांग्रेस में शामिल हो गए, दोस्त ?"

"अरे भाई, क्या कहूं ? चार पैसे भी उसके लिए खर्च हुए। मैं, मेरी स्त्री, बड़ा लड़का और उसकी स्त्री सब मेम्बर हो गए। अच्चन ने पिछले इतवार को ही कहा था। फिर उस टोपी वाले के साथ वे घर पर भी आए। औसप्पच्चन और कृष्णपिल्लाच्चन सबने चन्दा दे दिया। तुम शामिल हुए क्या ?"

मातु भी शामिल हो गया था। उसके पाँच पैसे खर्च हुए। स्वामी जी के कहने से ही वह मेम्बर बना। उसे भरती कराने के लिए सब प्रमुख लोग पहुँचे थे। करयोगम की पिछली बैठक में ही बात तय हो चुकी थी।

माथु को अपना एक सन्देह दूर कराना था। उसने पूछा—"मातुवकुञ्ञे,[1] मैं जरा जानना चाहता हूँ कि ये लोग इस तरह मेम्बर बनाते क्यों फिर रहे हैं ? करयोगम और एटव[2]का का अंग बनने में तो एक-न-एक उद्देश्य है। लेकिन स्टेट-कांग्रेस में क्यों शामिल होना चाहिए ?"

मातु नायर भी उसका ठीक जवाब नहीं जानता था। फिर भी उसके

---

१. मातुवकुञ्ञे='कुञ्ञ' शब्द 'बच्चे' के अर्थ में इस्तेमाल किया जाता है। मातुवकुञ्ञ=मातु बच्चा।

२. एटवका=ईसाइयों का ग्राम्य-संघ।

उद्देश्य के बारे में उसे एक सुस्पष्ट अनुमान था। उसने कहा—"अब सबको वोट का अधिकार मिला है। इसीलिए यह सब हो रहा है। मानकोम्पु[1] जाकर जब लौट रहा था तब मुन्नारमुखम[2] की एक सभा में थोड़ा सुना। वे कह रहे थे, 'सब लोग कांग्रेस में भर्ती हो जायँ। कांग्रस सरकार से सब लोगों के हित का काम करायगी'।"

माथु मापिला[3] के साधारण दिमाग में अचानक एक सन्देह उठा, 'सबका हित ये कैसे करायँगे? क्या यह सम्भव है?'

"मुझे यह नहीं मालूम। मैंने जो सुना, तुम्हें सुना दिया।

माथु मापिला की पत्नी, त्रेस्या (टरीसा) ने, जो यह बातचीत सुन रही थी, पूछा—"ये लोग हमें चावल या धान देंगे?"

माथु ने कहा—"हाँ, हाँ, उसे पाकर खाने की ताक में बैठे रहना काफी है।······धान चाहिए तो पाँच रुपये पसेरी खरीदना होगा।"

"तब ये लोग क्या करेंगे?"

अविश्वास का भाव प्रकट करते हुए माथु ने कहा—"ये लोग सब-कुछ करेंगे। हमें मालूम नहीं है क्या? 'करयोगम' और 'पैरिश' से क्या लाभ होता है? सब लाभ धन वालों को होता है। हमें क्या मिलता है? कुछ नहीं। हम तो दस पसेरी का खेत घाटे में आबाद करने के लिए बाध्य हैं।"

माथु ने आगे कहा, "इतना अधिक व्याज देकर हम खेती करते हैं। जैन्मी (जमींदार) और कर्ज देने वाले धान उठा ले जाते है। फिर भी देना बाकी रह जाता है। मेहनत जो करते हैं सो फिजूल में। कर्ज की

१. मानकोम्पु—जगह का नाम।

२. मुन्नारमुखम—जगह का नाम।

३. मापिला—ईसाई को 'मापिला' कहते हैं।

रकम बढ़ती जाती है। कहीं दो धूर जमीन रहे तो उसे भी मुकद्दमा करके छीन लिया जाता है। इस शोषण की सुविधा को बढ़ाने के लिए ही अब हमसे पैसा वसूल करके इस कांग्रेस का निर्माण किया गया है।"

मातु नायर ने कहा—"कांग्रेस को पैसा तो और जगहों से मिलेगा। हजार-हजार रुपये तो पुष्पवेली और मानत्तु-घरों से ही दिये गए हैं।"

"यह इसलिए दिया गया है कि हमारी जमीन हड़पने, रात में धान बेचते समय पकड़े न जाने और लगान के रुपये कम न होने देने की सुविधा मिले।"

यह सुनकर मातु नायर विचार में डूब गया। जो भी हो, सदस्य तो वह बन ही गया है। शिकायत पहुँचाने के लिए कम-से-कम एक जगह तो हो गई। इससे उसको थोड़ा सन्तोष हुआ। उसने कहा—"मानत्तु-घर में हमारे घर का पचास प.।रों का एक खेत जमानत (सेक्युरिटी) में पड़ा है। मेरा घर और खेत भी रेहन रखे हैं। कांग्रेस में एक अर्जी देकर देखना है कि लोग क्या करते हैं?"

माधु को भी इस तरह की एक अर्जी देनी थी।

बारह

शमयल, कोरन, कुञ्ञाप्पी आदि सबके खेतों में बोये गए बीज अंकुरित हुए। बुआई के बाद धान के पौधे बढ़े और उनमें बालें लग गईं। चारों ओर की हरियाली समय आने पर सुनहले रंग की शोभा में बदल गई।

पुष्पवेली औसेप्प के खेतों की कटाई का समय आ गया। कोरन के खेत से ही कटाई शुरू होने वाली थी। खेत में धान पककर कटाई के लिए तैयार था। करारबद्ध दासों के अलावा, जो औसेप्प के छै कुटिक्कार[1] थे, चेङनूर आदि दूसरी जगहों से एक सौ मज़दूर और बुलाये गए थे। उसी खेत के एक हिस्से में बाँध की बगल में कोरन की झोंपड़ी थी। कटाई में चात्तन भी आया था।

---

१. कुटिक्कार=कुटी में रहने वाले, कुटी--झोंपड़ी, कुटिक्कार= झोंपड़ियों में रहने वाले दास।

उस खेत में पहले कभी भी उस साल की तरह फसल नहीं हुई थी। सारा खेत धान की बालों से ऐसा भरा नज़र आता था कि डंठल का पता नहीं लगता था।

काम करने वालों को भी कटाई में बड़ा आनन्द आता था। एक कतार में शुरू करने पर कटाई मजे में दूसरे छोर तक बढ़ती जाती थी। बालों के भार से सब पौधे एक ओर को ऐसे झुक गए थे कि उन्हें काटना आसान हो गया था।

शमयल और कोरन खेत के नैऋत्य कोण[1] में उतरकर किनारे-किनारे एक तरफ पहुँच गए। कटाई शुरू हो गई। एक आदमी अपने खड़े होने की जगह से ही चार बढ़िया आँटी काट सकता था, इतनी अधिक उपज थी। इसलिए काटने वाले बहुत धीरे-धीरे आगे बढ़ते थे। फिर भी चारों ओर आँटी-ही-आँटी नज़र आने लगीं।

कोरन के लिए काटना सम्भव नहीं था। वह हाथ में हँसिया लिये हुए काटने वालों के पीछे देखता हुआ घूम रहा था। काटने वाले धान की बालों को बेकार न गिरावें, यह देखना उसका काम था।

वह आनन्द से फूला नहीं समाता था। उस खेती में क्या-क्या कठिनाइयाँ पैदा हुई थीं। कैसी खरी-खोटी बातें सुननी पड़ी थीं, अब वह एक श्रमिक की हैसियत से अभिमान कर सकता है।

काटने वालों के पीछे एक डंठल भी जमीन पर गिर जाता तो कोरन को वह असह्य हो जाता और वह चिल्ला उठता—

"ऐ मजूरिन !"

एक काटने वाली ने सिर उठाकर देखा।

गुस्से में भरकर कोरन ने पूछा—"इधर यह क्या गिरा है री ?"

---

१. नैऋत्य कोण=दक्षिण-पश्चिम कोण।

वह चैगनूर से आये हुए मजदूरों में से एक थी। उसने कहा—"वाह रे, यह कैसा तमाशा है ? पुंचा-खेत की कटाई में एक-आध बाल टूटकर गिर ही जाती है। यह कोई नई बात थोड़े ही है।"

कोरन आपे से बाहर हो गया।

"तुम लोग क्या खाते हो ? चावल नहीं खाते क्या ? यह मेरी मेहनत का फल है। एक-एक पौधा ध्यान देकर बढ़ाया गया है। यह सब खेत में ही बरबाद करने के लिए नहीं है।"

पास में काटने वालियों का ध्यान इस ओर गया। उतना अधिक कुछ गिरा नहीं था। दो ही डंठल थे। पुंचा-खेत में इससे अधिक साव-धानी से काटना सम्भव भी नहीं था। सारा धान आदमी के हाथ से ही काटा जाता है।

एक पुलयी ने कहा—"पुंचा-खेत में फ़सल का एक चौथाई भाग यदि खेत में न गिरे तो वह शाप हो जायगा।"

कोरन का गुस्सा और आवेश बढ़कर हास्यास्पद हो गया।

इसी बीच एक दूसरी काटने वाली ने पूछा—"यह कहाँ का दरिद्र निवासी है ? मालूम होता है कि इसने पुंचा-खेत देखा ही नहीं है।"

"क्यों जी, तुमने क्या कहा ?" हँसिया हिलाते हुए कोरन उसकी ओर बढ़ा।

कैसा गुस्सा था उसका।

वह पुलयी भी कम नहीं थी। उसे कोरन का लालच अच्छा नहीं लगा। समृद्धि के उस चैत्र महीने में सर्वथा अनुपयुक्त लगने वाला वह लालच उसे लज्जास्पद मालूम हुआ। क्या धान देखकर आदमी अपने को इस तरह भूल जाता है ? तम्पुरान को भी इतना लालच नहीं है। वह कोरन को ग़ौर से देख रही थी।

उस पुलयी की ओर बढ़ता हुआ कोरन का हाथ चिरुता ने दौड़कर

पकड़ लिया। कोरन ने हाथ छुड़ाकर जाने की कोशिश की। चिरुता ने नहीं छोड़ा। वह बोली—"यह कैसा पागलपन है?"

"वाह धान बरबाद करने से रोका तो बढ़-बढ़कर बोल रही है।"

चिरुता कोरन को वहाँ से पकड़ ले गई। उसे अपनी कतार में ले जाकर खड़ा किया। और अधिकार भाव से पूछा—"धान देखकर दिमाग खराब हो गया है क्या!"

कोरन जरा ठण्डा हो गया। उसे अनुभव हुआ कि उसका गुस्सा सीमा पार कर रहा था। फिर भी वह अपनी गलती स्वीकार करने को तैयार नहीं था। उसने कहा—"पान हो तो जरा दो!"

चिरुता के फांड़ से उसने पान की पोटली निकाली।

चिरुता ने पूछा—"पिछले साल भी पुंचा-खेत में काटा था न? तब इतना गुस्सा क्यों दिखा रहे हो?"

"यह मेरी मेहनत का फल है न? बिना गिराये कटाई होगी तभी तो उपज देखने लायक होगी।"

"ओह ऐसा है? जिसने कटाई का काम किया है उसे यह भी मालूम नहीं है कि पुंचा-खेत में कटाई के समय धान गिरता है।"

चिरुता के तर्क को कोरन नहीं काट सका। उसने कुछ उत्तर नहीं दिया। पान खाने के बाद कोरन का दिमाग और भी ठण्डा हो गया। चात्तन भी वहाँ पहुँच गया।

चिरुता ने कोरन से पूछा—"क्या हँसिया लेकर घूमते रहना ही काफी है? एक जगह खड़े होकर दो आँटी काट लोगे तो थोड़ी और मजदूरी मिल जायगी न?"

"काटने वालों के पीछे न लगूँ तो धान बरबाद होगा।" कोरन ने कहा।

चात्तन ने राय दी, "इतना झगड़ा हो गया है। अब सब सावधान हो

गए हैं। गिरायेंगे नहीं।"

कोरन चिरुता की दाईं तरफ खड़ा होकर काटने लगा। चात्तन कतार बदलकर चिरुता के बाईं ओर पहुँच गया। काटते-काटते कोरन, चिरुता और चात्तन तीनों आपस में बातें भी करने लगे।

थोड़ी दूर तक काटने के बाद चिरुता ने कोरन के पीछे ताककर चात्तन से कहा—"चात्तच्चा, जरा इधर तो देखो! कितना धान गिराया है।"

कोरन ने जहाँ धान काटा था वहाँ भी धान गिरा था। उसका चेहरा उतर गया। उसने कहा—"बात यह है कि धूप के कारण मैं ठीक से देख नहीं सका।"

ठीक से कुछ उत्तर न सूझने के कारण कोरन को इस तरह बात बनाते देखकर चिरुता अपनी हँसी न रोक सकी। लेकिन कोरन का मज़ाक उड़ाना उसका उद्देश्य नहीं था। अपने बच्चे की किसी नादानी पर माँ को जो आनन्द की हँसी आती है, यह वही थी।

कोरन भी हँस पड़ा।

चात्तन खड़ा-खड़ा यह सब देख रहा था। गुस्से से काँपते हुए कोरन को चिरुता कैसे पकड़ लाई, उसे डाँटा। तब कोरन ने पान माँगा। चिरुता ने दिया। थोड़ी देर उसके पास रहने पर कोरन बिलकुल शान्त हो गया। बेचारा अपनी बेवकूफी भी समझ गया।···चिरुता में कुछ शक्ति है।

चात्तन ने एक लम्बी साँस ली।

तीनों काटने में लगे थे। चात्तन ने सोचा, पिछले साल की कटाई के समय से अब चिरुता कितनी दूर हो गई है। उन दिनों चात्तन ने उससे क्या-क्या कहा था? उसके साथ मजाक करने और मनोरंजक बातें करने में उसे जरा भी संकोच नहीं होता था। उसका (चात्तन का) मन

उन दिनों कितना हल्का था। वह कुछ भी कह सकता था, कुछ भी कहने को उसका मन भी करता था। लेकिन आज ?···आज उसका हृदय एक निराशा के भार से बोझिल है। उसमें न मनोरंजन की भावना रह गई है, और न बोलने की शक्ति। कुछ कहना भी चाहे तो कण्ठ से आवाज नहीं निकलती। अब उसे एक गृहिणी से बोलना था और उसकी बदली हुई स्थिति के अनुसार मर्यादा का पालन करना था। आज ही की तरह उन दिनों भी कोरन चिरुता के दाईं ओर काम करता था। आज उसका चिरुता पर अधिकार है और चिरुता का उस पर। वे दोनों अब एक हो गए हैं। इन सब बातों के बारे में चात्तन सोचता रहा।

बिना कुछ बोले वह काट रहा था। उसे, जो एक होड़ में हार चुका था, सोचने के लिए काफ़ी बातें थीं।

कोरन ने कहा—"मुझे जरा पीने की इच्छा होती है। मन आनन्दित रहने पर भी भूख-प्यास में कुछ खा-पी लेना चाहिए।"

चिरुता ने विरोध नहीं किया। उस दिन घर में भी खाकर आने के लिए कुछ नहीं था सवेरे थोड़ी बासी कञ्जी पीकर ही दोनों निकले थे।

कोरन ने अपनी कतार से एक आँटी लेकर अपनी थैली में रखी। दूर पर ताड़ की छत्री लगाकर बैठे हुए औसेप्प ने यह देख लिया। कोरन थैली को अपनी काँख में दबाये हुए निकला।

"थैली में क्या है रे ?" औसेप्प ने चिल्लाकर पूछा।

कोरन ने जवाब दिया—"दो डंठल हैं मालिक, दास ने आज कुछ नहीं खाया है। जरा पानी (पानी-ताड़ी) पीने के लिए है।"

"डंठल ! रखो वहाँ। यहाँ यह नहीं चलेगा।" कहते-कहते औसेप्प उठकर कोरन की तरफ आये। उन्होंने आगे कहा—"कुछ खाया नहीं है तो घर जाकर खाना। इकरारनामा लिखते समय ही यह बता दिया

था कि पुराना रिवाज़ नही चलेगा।"

कोरन स्तब्ध हो गया।

"रे, रखता क्यों नहीं ?" तम्पुरान चिल्लाकर बोला।

कोरन अधमरे की तरह अपनी कतार की ओर बढ़ा। दूसरे काटने वाले सब यह देख रहे थे। थैली से कोरन ने आँटी निकालकर रख दी। और दूसरी तरफ बाँध पर जाकर मुंह नीचा करके बैठ गया। उस समय उसकी हालत बड़ी दयनीय थी। आदमी भूख और प्यास सब सह सकता है, किन्तु यह अपमान उसे असह्य था!

कोरन से थोड़ी देर पहले जो चेडन्नूर वाली झगड़ी थी, बोली—"वह इसीके लायक है।"

तब एक दूसरी ने कहा—"ऐसा मत कह री, बेचारे ने पानी और कीचड़ में खड़े-खड़े अपनी मेहनत से यह सब उपजाया है न ? तम्पुरान ने उससे आँटी रखवाकर ठीक नहीं किया।"

एक तीसरी ने कहा—"उसके-जैसा अपने तम्पुरान का हित सोचने वाला आदमी मैंने कोई दूसरा नहीं देखा।"

चौथी बोली—"तम्पुरानों का हित सोचने वालों को ऐसा ही अनुभव हुआ करता है।"

कुछ समय तक कोरन ऐसे ही बैठा रहा। उसे चुपचाप बैठे देखकर तम्पुरान ने डाँटा। वह फिर उठकर काटने वालों के पीछे घूमने लगा।

तेरह

धान पकने के बाद लोग कटाई की ओर नज़र लगाये धीरज के साथ अकाल का सामना कर रहे थे। कोरन के घर में कई दिनों से कुछ खाने के लिए नहीं था। दूसरे लोगों से जितना उधार मिल सकता था उतना वह ले चुका था। अब उन लोगों के पास भी कुछ नहीं रहा। इस तरह भूखों रहने के दिनों में ही कटाई के दिन आ गए।

शाम को सबने आँटियों के बोझ बाँध-बाँधकर खलिहान में ले जाकर रख दिए। तब तक अन्धेरा हो चुका था।

तम्पुरान ने सुनाया, "आज कुछ नहीं मिलेगा। सब लोग अपनी-अपनी थैली इधर दिखाकर चले जाओ!"

इस तरह खलिहान से सब लोग निकल गए। कपड़े में सटा धान का एक दाना भी कोई अपने साथ नहीं ले जा सका। इट्यानी की परयी ने अपने खोंचे में जो साग खोंटकर रखा था, तम्पुरान ने उसे भी वहीं रखवा लिया।

'इन दिनों को कैसे बितावें', इस चिन्ता ने चिरुता के भीतर मानो एक आग ही प्रज्वलित कर दी। कोरन शरीर और मन दोनों से थका हुआ था। उस दिन सवेरे वह जिस आनन्द का अनुभव कर रहा था, उसका कैसा अन्त हुआ? उसे कुछ नहीं कहना था। लेकिन वह सोच रहा था।

पत्रोस की स्त्री जरा चतुर थी। तम्पुरान की तेज आँखों से बचाकर वह करीब एक सेर धान ले आई। उस सेर-भर धान को पत्रोस और कोरन ने आपस में बाँट लिया। रात को ही लोगों ने धान उबाला, सुखाया, कूटा और खाना बनाकर खाया।

दूसरे दिन कोरन और चिरुता खाली पेट कटाई पर गए।

कटाई के समय कोरन कई बातें कहने और करने की सोच रहा था। मुमकिन है तम्पुरान से वह विद्रोह भी कर बैठे।

काटने वालों के पीछे वह आज भी घूम रहा था। लेकिन धान गिरता है, यह नहीं देखता था। किसी से भी नहीं झगड़ता था। आगे से वह अपने-जैसे लोगों से झगड़ेगा भी नहीं।

इस तरह जब वह घूम रहा था, चेङनूर की एक मजदूरिन ने पान खाने के लिए उसे बुलाया। पान खाते-खाते उसने पूछा—"कोरच्चा, पिछले साल कहाँ काम किया था?"

"ओणप्पणी में मैं इसी साल शामिल हुआ हूँ।"

"पिछले साल हम भी यहाँ कटाई में आये थे। इस साल खेत में जितना गिर रहा है उतना पिछले साल पैदा भी नहीं हुआ था।"

थोड़ी देर के लिए कोरन ने कुछ नहीं कहा। मजदूरिन ने आगे कहा—"पिछले साल बाँध पर आने पर खेत में उतरने का मन ही नहीं करता था। खेत में कुछ था ही नहीं। इस बार तो काटते-काटते यह खत्म ही नहीं होता। कुछ लोगों की रखवाली का ऐसा ही फल होता है।"

कोरन जरा तन गया। उसने कहा—"सच कहता हूँ बहन, मैंने कितना कष्ट उठाया है, यह कह नहीं सकता। मैंने जी तोड़कर काम किया है। लेकिन......."

कोरन ने आगे कुछ नहीं कहा। उसकी आँखें भर आईं। वह अपनी उस दिन की हालत सुनाने जा रहा था। लेकिन स्वाभिमान ने उसे आगे कुछ कहने से रोक दिया। फिर भी वह स्त्री उसके मन की बात समझ गई। वह बोली—"यह तम्पुरान बड़ा लालची है। इतना लालची कि उसके बराबर और किसी को मैंने इस प्रदेश में देखा ही नहीं।"

वह औसेप्प के अति लोभ की कहानियाँ सुनाने लगी। सब सुनकर कोरन ने कहा—"मेरा तो एक ही विचार है, 'वह नालायक है, निर्दय है' ऐसा मैं अपने बारे में सुनना नहीं चाहता। मैंने काम किया है। धान भी खूब पैदा हुआ है। रखवाली की जिम्मेवारी पहली बार लेकर मैंने काम किया है। मेरी एक ही इच्छा है कि मैं यह जानता हूँ कि इसमें पैदावार कितनी हुई है?"

काटने वालों को बातों में फँसाकर काम रोकने से तम्पुरान ने कोरन को डाँटा।

दोपहर को कोरन औसेप्प के पास गया। उसमें खड़े होने की ताकत नहीं थी। जाकर थोड़ा पीने के लिए एक मुट्ठी धान माँगने का उसका विचार था। लेकिन औसेप्प का भाव देखकर उसने धान माँगने का विचार छोड़ दिया।

चेहरे के भाव में कितना अन्तर हो जाता है। बुआई के दिनों से अब कितना परिवर्तन! उन दिनों मिलने पर औसेप्प हँसते थे। कुशल-मंगल पूछते थे। हमदर्दी दिखाते थे। कितने खुशमिजाज दीखते थे: लेकिन आज?...जान-पहचान का भी भाव नहीं। इतना ही नहीं, आज तो एक तरह की घृणा और असहिष्णुता दिखाते हैं।

औसेप्प ने कोरन को कड़ी नज़र से और ग़ौर से देखा।

कोरन ने कहा—"दास की एक प्रार्थना है।"

"क्या है?"

"दास पहले-पहल औणप्पणी में शामिल हुआ है।"

"इसलिए?"

"और कुछ नहीं, इस खेत की उपज जरा अलग नापी जाय तो पता चलेगा कि कितना धान हुआ है?"

कुछ देर तक औसेप्प ने जवाब नहीं दिया। यह निवेदन उसको ज़रा भी अच्छा नहीं लगा।

कोरन ने कहा—"दास यह जानना······"

"मेरी साल-भर की आमदनी भी तुझको जाननी है? मुझे यह रंग मत दिखा! चला जा यहाँ से!"

कोरन वहाँ से चला गया। उसकी समझ में नहीं आया कि उसकी प्रार्थना में आखिर क्या गलती थी। उसके कहने में तो कोई गलती नहीं हुई? क्या वह सवाल ही गलत था? शायद वह एक दास के अधिकार के बाहर की बात थी।

उस दिन दोपहर होने पर औसेप्प चले गए। दोपहर के बाद चाको आया। उस दिन कटाई के बाद मजदूरों को एक-एक आँटी मिलनी थी। बोझ खलिहान में पहुँचाने के बाद हरेक आदमी एक-एक आँटी चाको के सामने रखता था और वह उसमें से थोड़ा खींच लेता था और बाकी दे देता था। कोरन को लगा कि उसकी आँटी में से चाको ने जरा ज्यादा ले लिया है। लेकिन चिरुता जब आँटी लेकर आई तब चाको ने कायदे के खिलाफ़ आँटी उठाकर देखने के बाद चिरुता की ओर गौर से देखा और नाम के लिए ही उसमें से एक डंठल खींच लिया।

चिरुता जब अपनी आँटी कोरन की आँटी के साथ बाँधने लगी तब

कोरन एक चीते की तरह गरजकर बोला—"नहीं, मेरी आँटी में न बाँधना, उसका मुझे काम है।"

चिरुता ने नहीं छोड़ा। उसने अधिकारपूर्वक पूछा—"क्या काम है? ताड़ीखाने में ले जाकर बरबाद करना है?"

"जा, जा, इसका निश्चय मैं ही करूँगा।"

कोरन खड़ा-खड़ा दाँत पीस रहा था। उसका गुस्सा सीमा से बाहर हो रहा था।

मरिया ने चिरुता को समझाया।

"नहीं, अम्मच्ची[1], मैंने पीने के लिए धान और पैसा खुद दिया है। यह चैत मास होने पर भी उपासा ही रहा है। आज थोड़ा जो मिला है उसे भी ले जाकर ताड़ीखाने में दे आना चाहता है। यदि सदा ही ऐसा हुआ करे तो कैसे काम चलेगा?"

"ऐसा ही होता है चिरुता, बहुत-कुछ देखकर भी नहीं देखा; जैसे बरतना चाहिए इन मर्दों को सहारा देकर हमींको आगे ले जाना है।"

कोरन अपनी आँटी थैली में रखकर जाने लगा।

चिरुता ने कहा—"आज सबपे रूठा है। अभी पीकर आने से तुरन्त ही भात नहीं मिलेगा। मुझे घर जाकर इसे उबालकर और कूटकर चावल तैयार करने के बाद ही भात बनाना है।"

"मैं आज आऊँगा ही नहीं।"

एक आँटी धान से जितनी मिल सकती थी, उतनी कोरन ने लेकर पी। लेकिन अपना बढ़ता दुःख और क्षोभ वह उतने से भुला नहीं सका। वह भूलना चाहता था। लेकिन वह एक बोतल ताड़ी से नहीं भुलाया जा सकता था। उसने दुकान वाले से एक बोतल और उधार के तौर पर

१. अम्मची=अम्मा।

माँगी। लेकिन उधार नहीं मिली।

"इस चैत्र महीने में तुम उधार माँगते हो ?"

इस सवाल ने उसके दुःख को बढ़ाने का ही काम किया। चैत्र महीना। वह छः सौ पसेरी के खेत का रखवाला भी है ! लेकिन एक बोतल ताड़ी के लिए उसकी थैली में धान नहीं। कोरन को लगा कि जैसे वह रो देगा।

इतने में चात्तन वहाँ आया। उसके पास पैसा था। दोनों ने मिल-कर जी-भरकर पी।

उस दिन आधी रात के बाद दूर तक फैले हुए उस पुंचा-खेत में चिल्लाने की आवाज़ गूँजती सुनाई पड़ी। वह सिर्फ चिल्लाहट नहीं थी। वह ताड़ी की मस्ती में, उसके दिमाग में बेचैनी पैदा करने वाले विचारों के जो वाक्य और शब्द बैठे थे, उनकी अस्पष्ट ध्वनि थी।

वह छः सौ पसेरी के खेत का रखवाला था। उस चिल्लाहट में ताकत थी, अभिमान था। और उसके बाद थी एक गुस्सा पैदा करने वाली घटना की याद। तम्पुरान का बेटा उसकी चिरुता को घूर रहा था। यह उसने देखा है।

चौदह

कटाई अपनी चरम सीमा को पहुँच गई। दिन-भर कटाई और रात को मिड़ाई। कुट्टनाट में दिन-रात में फर्क नहीं मालूम होता था। कोई सोता नहीं था। सब जगह आँटी, धान-डंठल और पुआल का ही दृश्य था। रात-दिन काम करने पर भी काम मानो खत्म ही नहीं होता था। आदमी का तन, मन और दिमाग, सब एक यंत्र की तरह मिलकर काम कर रहे थे।

हजारों पसेरी के बहुत दूर तक फैले बड़े-बड़े खेतों में से एक-एक डंठल हँसिया से काटकर आँटियों में बाँधकर रखना, सब काम आदमी के ही हाथ से होता, फिर आँटियों के बोझ बनाकर उन्हें सिर पर रख-कर खलिहान में पहुँचाना।

खलिहान में सब जगह पहाड़ियों की तरह ढेर-के-ढेर धान दिखाई पड़ते हैं। सब धान, आँटियों को पाँव से मीड़कर डंठल से अलग किया जा चुका है। अब इसे सुखाकर और इसमें से पोला धान निकालकर

धानागार की अँधेरी कोठरियों मे रख देने का काम बाकी है।

इस महान् काम में जो लगे हैं उनमें किसी को भी न थकावट का खयाल, न सुस्ती, न भूख, प्यास। कुछ नहीं मालूम होता। सामने बट-लोही-भर पकाने लायक चावल हो, तसला-भर धान रहे, तो किसको भूख का खयाल रहता है ?

औसेप्प के खलिहान में काम का ठिकाना नही। कई दिनों की काटी आँटियां। ढेर-की-ढेर रखी हैं। कहीं औरतें मिड़ाई में लगी हुई हैं। कहीं डंठल से अलग किये हुए धान की नपाई हो रही है; और कहीं पीले धान को तोला जा रहा है। खलिहान में कहीं भी तिल रखने के लिए जगह नही है।

इस भीड़-भड़क्के और जगह की तंगी में भी, कोरन को यह खयाल रहता है कि उसके खेत का धान कहाँ रखा है ?

एक दिन शाम को कटाई से लौटने पर उसने धान के ढेरों में से कई ढेर अपनी जगह पर नहीं देखे। उन्ही ढेरों में कोरन के खेत के ढेर भी थे। वे सब पोले धान का अंश निकालने के बाद औसेप्प के धानागार में ले जाए जा चुके थे।

औसेप्प खलिहान में एक झोंपड़ी में बैठे थे। कोरन ने पास में जाकर पूछा—"तम्रा, दास की रखवाली वाले खेत में के तीनों ढेरों में कितना धान था!"

"यह जानकर क्या करेगा ?"

"दास यों ही जानना चाहता है।"

कोरन का विश्वास था कि यह जानने का उसका अधिकार है।

औसेप्प झोंपड़ी के छप्पर में खोंसकर रखी हुई बेंत की छड़ी खींच-कर उस पर टूट पड़े और कोरन की पीठ पर एक बेंत जड़ दिया। दूसरा पड़ने के पहले ही पत्रोस ने उसे खींचकर हटा दिया। इट्याती

उसे वहाँ से खींच ले गया । औसेप्प ने गुस्से में गाली बकनी शुरू की ।

तब तक चिरुता पहुँच गई और कोरन को अपने साथ ले गई। कोरन मानो बेसुध अवस्था में खिंचता चला गया ।

शमयल पुलयन ने पास आकर पूछा—"तुमने फिजूल की बात क्यों पूछी थी ? मैं तो मुखिया हूँ । इतने साल हो जाने पर भी मुझे ये सब बातें नहीं मालूम हैं । मैं पूछता भी नहीं ।"

तब पत्रोस ने कहा—"कितना भी हो, हमको इससे क्या ? हमें क्यों जानना चाहिए ? तम्पुरान ने बीज और पैसा खर्च किया । हमने काम किया तो हमें मजदूरी मिली । 'कितना धान हुआ' यह सब हमें नहीं पूछना चाहिए ।"

उसका प्रश्न अनुचित था क्या ? चिरुता भी उसकी गलती निकाल रही थी ।

उसने पूछा—"तो हम सिर्फ धान उपजावें और कितना हुआ यह भी न जानें ?"

"ऐसा ही होता है ।" शमयल ने जवाब दिया ।

"हम क्यों जानें ? अब तक किसी भी परया और पुलया को यह नहीं मालूम हुआ है ।"

सबने मिलकर सलाह की कि उस दिन कोरन को खलिहान में नहीं जाना चाहिए । चिरुता और कोरन घर चले जायँ । कुछ खाना बनाकर खाना खिलाने के बाद चिरुता ही मिड़ाई के लिए जाय । चाँदनी रात थी ही । कोरन को खलिहान में देखकर सम्भव है तम्पुरान फिर उस पर हाथ उठा बैठें ।

उसी समय झोंपड़ी के पास रोने और डाँटने की आवाज सुनाई पड़ी । तम्पुरान ओलोम्पी के लड़के को पीट रहे थे । चाको को उधर पास ही में देखकर उससे कहकर कोरन और चिरुता चले गए ।

आधी रात बीत चुकी थी। स्वच्छ चाँदनी चमक रही थी। इधर-उधर की झोंपड़ियों में धान कूटने की आवाज बन्द हो गई। लेकिन सब जगह आग जल रही थी। खाना पक रहा था।

खलिहान में मिड़ाई जारी थी। दौड़ती-हाँफती चिरुता खलिहान में पहुँची। वह काँप रही थी। अब भी उसके चेहरे पर डर छाया हुआ था। वह घूम-घूमकर देखती थी।

मरिया ने, जो खड़ी-खड़ी मिड़ाई कर रही थी, पूछा—"क्यों चिरुता? क्या बात है री?"

चिरुता कुछ बोल नहीं सकी।

"मालूम होता है कि लड़की डर गई है। क्या बात है री? कुछ देखा क्या?" एक बड़ी उम्र की पुलयी ने पूछा।

उसने कहा—"रात और सवेरे का खयाल किये बिना अकेले घूमना ठीक नहीं है। इन खेतों में प्रेत रहते हैं।"

चिरुता की धड़कन कुछ कम हो चली थी। भूत-प्रेत के डर से उसकी यह दशा नहीं हुई थी, यह स्पष्ट था। ऐसा मालूम हो रहा था कि जैसे वह बहुत दूर तक पीछा करने वाले एक विषैले साँप से भागकर बची हो।

"क्या हुआ री?" सबने पूछा।

चिरुता ने जवाब दिया—"कुछ नहीं, ...मैं दौड़ी-दौड़ी आई, इसलिए हाँफ रही थी।"

एक ने उसे गौर से देखकर कहा—"छीः, तू डर गई मालूम होती है। डर गई है तो कह! उसके लिए कुछ उपाय किया जा सकता है।"

चिरुता ने जवाब दिया कि वह डरी नहीं है, और धान मीड़ने में लग

गई। वह कुछ बोलती नहीं थी।

मरिया ने पूछा—"तू क्यों चुप है चिरुता ? कोरन सो गया क्या ?"

"न, ऐसे ही विचार में डूबा बैठा है। जिसने काम किया है उसका यह जानने की इच्छा करना सहज ही है न कि खेत में कितना धान हुआ है ?"

"यह क्यों जानना चाहिए री ?"

"यों ही।"

"यही बात है। क्या उसने कुछ कहा ?"

"नहीं, मुंह तक नहीं खोला।"

थोड़ी देर चुप रहने के बाद मरिया ने धीमी आवाज में पूछा—"तू डरकर क्यों भागी थी बेटी ?"

ऐसा लगा कि मरिया ने कुछ ठीक-ठीक अनुमान लगा लिया हो।

"अभी बताती हूँ अम्मच्ची, उधर चलो !"

चिरुता और मरिया पुआल के ढेर के पीछे की ओर गई। दुःख-भरी आवाज में चिरुता ने सब बातें कह सुनाईं।

"खेत के उस पार पेड़ों की छाया में जब वह पहुँची तब न मालूम कैसे कहाँ से चाको वहाँ आ धमका।" ······चिरुता ने अपनी छाती मरिया को दिखाई वहाँ नाखून के निशान लगे थे। उसके कपड़े का छोर भी पकड़ा-पकड़ी में फट गया था।·······किसी तरह वह चाको का हाथ छुड़ाकर भागी थी।

मरिया को यह बात सुनकर आश्चर्य नहीं हुआ। चिरुता ने अन्त में कहा—"जब से हम यहाँ आये हैं तब से ही वह मुझे घूरा करता है। एक बार उससे (कोरन ने) कहा भी था 'तम्त्रा, औरतों के पीछे से हट जाओ,' मुझे शुरू से ही इसके बारे में सन्देह था।"

मरिया ने धीरे से जवाब दिया—"ऐसा ही होता है बेटी ! वह सब

जवान लड़कियों के पीछे पड़ा रहता है । चार-पाँच को उसने पकड़ा भी है। वे इसी कटाई में आई हुई लड़कियाँ हैं। उन्हें ढेर-का-ढेर देता है। उसे तेरी तरफ घूरते मैंने भी देखा था।"

"मैंने भी देखा है। पर यह यमदूत गुप-चुप आकर पकड़ेगा, यह मैंने नहीं सोचा था।"

"ऐसा ही ये छोटे तम्पुरान लोग किया करते हैं बेटी! उन्हें परयों-पुलयों की ही लड़कियाँ चाहिएँ। जब से हमारी लड़कियाँ ब्लौज और जम्पर पहनने लगी हैं तब से यही हालत है।"

तब चिरुता ने कहा—"यह कहीं घर में जान जाय तो·····"

मरिया ने घबराकर कहा—"ओ, बेटी, चुप, चुप! वह जान जाय तो चुप नहीं रहेगा। नतीजा यह होगा कि ये लोग उसे खतम ही कर डालेंगे।"

"मुझे भी वही डर है।"

"होशियार रहना काफी है।" एक-दो साल में एक-दो बच्चा भी हो जाय तो तब कोई डर नहीं। तुम डरो मत बेटी! कोरन से कुछ मत कहना।"

"मुझे भी शर्म लगती है न? कैसे कहूँगी?"

पन्द्रह

उस दिन पुष्पवेली औसेप्प के यहाँ दासों का हिसाब चुकाने का दिन था। उनके सब दास इकट्ठे थे।

सबसे पहले शमयल का हिसाब हुआ। औसेप्प ने हिसाब करके बतलाया कि शमयल ने पच्चीस पसेरी धान और पच्चीस रुपया उधार लिया है। वायदे के मुताबिक पूरे दिन काम किया है। और बाकी-साकी सब काटने के बाद उसे चालीस पसेरी धान और मिलना चाहिए। उन्होंने पूछा—"क्यों रे हिसाब ठीक है न ?"

इस जोड़-घटाव के बारे में शमयल ने कुछ नहीं कहा। वह मद, मिलान, जमा-खर्च आदि हिसाबी बातें नहीं जानता था। तीस साल से ऊपर से उसका हिसाब इसी तरह होता आया है। तम्पुरान कुछ जोड़ते, कुछ घटाते, और आखिर में पूछते—"हिसाब ठीक है न ?"

हमेशा की तरह उसने जवाब दिया—"जी !"

उसका स्वभाव ही ऐसा था।

जो कुछ हो रहा था उसे कोरन चुपचाप खड़ा-खड़ा देख रहा था। उसे अचरज हुआ। हिसाब जोड़ने का यह कैसा तरीका है? छै हजार पसेरी की खेती के मुखिया परयन की आय चालीस पसेरी धान। कर्ज-उधार की जो बातें कहीं सो सब ठीक होंगी क्या? कोरन की समझ में कुछ नहीं आया। इस तरीके से दूसरों को कितना मिलेगा? बाँटने, नापने और रखवाली के लिए कुछ नहीं दिया।

एक-एक करके दूसरों का भी हिसाब हो गया। सब तम्पुरान ही जोड़ते थे। इट्याती को दस पसेरी, औलोम्पी को पन्द्रह, ऐसा हिसाब हुआ।

यह सब देख-देखकर कोरन अशान्त होता गया। उसे कुछ पूछने का मन हुआ। तम्पुरान खुद ही इस तरह क्यों हिसाब करते हैं? इसमें उसे बड़ा भारी धोखा मालूम हुआ। उसका खून गरम होने लगा। कोई कुछ नहीं बोलता। सब चुपचाप उनका हिसाब मान लेते हैं। अच्छा, उसका हिसाब करने लगेंगे तब! आखिर में कोरन का हिसाब करने की बारी आई। औसेप्प ने जैसे सबसे पूछा था वैसे ही कोरन से भी पूछा—"तूने कितना लिया है रे?"

वह तो कोरन को रात-दिन, हर वक्त याद रहता है। लेकिन उसने कहा नहीं।

औसेप्प ने हिसाब देखकर बतलाया—"तीस रुपये और बीस पसेरी धान।"

कोरन चौंक पड़ा। उसने बीस रुपये और पन्द्रह पसेरी धान ही उधार लिया था। उसके बिना जाने ही उसके मुंह से निकल गया, "यह गलत है तम्रा!"

यह अप्रत्याशित था। कोरन और औसेप्प दोनों चौंक पड़े। हिसाब—वहीं से सिर उठाकर तम्पुरान ने पूछा—"क्या कहा रे?"

"दास ने उतना नहीं लिया है।"

"पाजी कहीं का ! तू हिसाब बताता है ?"

क्रोध के कारण आपे से बाहर होकर औगेप्प कूदकर खड़े हो गए।

"क्यों रे, मेरा हिसाब गलत है ? सिर्फ तेरे लिए मेरा हिसाब गलत हो गया ? बेशर्म कहीं का !"

पत्रोस ने कहा—"रे कोरा, तम्पुरान का हिसाब कैसे गलत होगा ?"

"मैंने जो बतलाया उतना ही मैंने लिया है।"

तम्पुरान ने पत्रोस को अपराधी सिद्ध किया।

"ऐसे शोख आदमी को लाकर यहाँ काम में लगाकर तुमने ही गलती की। मैंने उसी दिन कहा था। दुष्ट, मेरा हिसाब गलत है ?"

सबने मिलकर कोरन की ही गलती निकाली। वह भूल कर रहा है। तम्पुरान का ही हिसाब ठीक होगा।

कोरन सोचा करता था कि उसे चिरुता के लिए कपड़ा लेना, झोंपड़ी खड़ी करनी, बाप के पास कम-से-कम एक महीने का खर्च भेजना, ऐसे कितने ही काम पूरे करने हैं। इन सबके लिए इतना धान मिलेगा। ऐसी हालत में उससे भूल कैसे हो सकती थी। फिर भी उसकी सचाई झूठ में बदल गई। जीवन के रक्त से लिखित सत्य झूठ बताया गया। उस जबरदस्त धोखे में पड़कर उसके साथी भी उसे ही दोषी ठहराने लगे।

कोरन निस्सहाय था। तम्पुरान ने फिर से हिसाब जोड़ना शुरू किया।

प्रति क्षण कोरन की आत्मा नये-नये विकारों और आवेशों से उद्विग्न हो रही थी। ऐसे विकार और आवेश, जो पहले कभी उसने अनुभव नहीं किये थे।

ऐसी घटनाएँ······हाँ बहुत पहले हुई हैं। लेकिन उन दिनों ऐसा

विकार उत्पन्न नहीं हुआ था।······

जिन्हें तम्पुरान कहा जाता है उनका विश्वास क्यों करना चाहिए?·· वे यह धान इकट्ठा करके क्या करेंगे?····इसे पैदा करने में वे कितना परिश्रम करते हैं?

आज पहले-पहल कोरन को लगा कि उसके सारे श्रम का फल वह झुककर हिसाब जोड़ने वाला हड़प रहा है।······उसका (कोरन का) भी गुज़ारा होना है। उसका भी हक है, वह काम करने वाला है·····उस धान और धन में उसका ही हिस्सा है।······किसी को दया करने की जरूरत नहीं है।······कोरन ने दाँतों से होठ काटकर दबाया। उसे लगा कि वह क्यों न जोरों से रो पड़े।······क्यों न साफ-साफ दो बातें कहे। धान पर उसका भी हक है। वे नहीं देंगे तो वह जबरन अपना हक लेगा।······क्यों न उस धोखेबाज की गर्दन मरोड़ दे?······क्यों न एक छोटी-सी मशाल से उसकी कोठी हा······? कोरन को लगा कि उसका दम फूल रहा है।

उसने पास में खड़े अपने साथियों को देखा। सब-के-सब भाव-शून्य की तरह खड़े थे। इन सबको कुछ महसूस नहीं होता क्या?

तम्पुरान ने सिर उठाकर सुनाया, "तुम्हें बारह पसेरी धान मिलेगा।"

"अरे यह कैसा हिसाब है?"

औसेप्प का गुस्सा अब तक खत्म हो चुका था। एक मन्द मुस्कराहट के साथ उन्होंने कहा—"हिसाब झूठ नहीं बोलेगा रे!"

"कितनी पसेरी धान मेरे लिए तय हुआ था?"

"इकरारनामे में वह साफ है।"

"एक बात कहूँगा। मुझे एक-एक दिन अन्तर देकर एक-एक आँटी ही दी गई है। एक आँटी एक बार पीने के खयाल से उठाई थी तो वह भी छीन ली गई थी। यह कैसा हिसाब है तम्रा?"

"रे, यह सब उसी दिन तय हो गया था न कि पुरानी रीति के अनुसार कुछ नहीं मिलेगा ? तय की गई रकम से उधार काट करके बाकी तुम्हें मिलना है। यह साफ़ लिखा हुआ है। तुमने ऐसे ही इकरारनामे पर दस्तखत किये हैं।"

"उसके अनुसार मैं हिसाब भी जानना चाहता हूँ।"

"दूसरों का हिसाब ऐसे ही हुआ है ?"

"मैंने कितने रुपये लिए थे ? किस भाव से धान का हिसाब लगाकर काटा गया है ?"

"बाकी सबके साथ जैसा किया गया है वैसा ही तुम्हारे साथ भी हुआ है।"

"बुरा मत मानियेगा ! यहाँ किसी ने भी हिसाब नहीं पूछा। यह क्यों पूछता है, ऐसा भी न सोचिये ! झोंपड़ी खड़ी करनी है। इस साल चैत्र में यहीं पर लगा रहा। यहाँ जो मिला, उसके अतिरिक्त और कुछ भी कहीं से नहीं मिला है। दास ने दस आँटी भी इस महीने में नहीं काटी हैं।"

औसेप्प ने चुपचाप सब सुन लिया। एक परया का इस तरह बातें करना उन्होंने अब तक बर्दाश्त नहीं किया था। आज उनमें एक परिवर्तन दिखाई पड़ा।

कोरन अपनी करुण कहानी आगे कहता गया—

"दास यहाँ पहले-पहल ओणप्पणी में काम कर रहा है। दास एक नौजवान है। 'यह छोकरा नालायक है' ऐसा दास के बारे में कोई न कहे, इस खयाल से दास ने जी-तोड़ परिश्रम करके धान पैदा किया है।"

कोरन का गला भर आया, आँखें सजल हो गईं।

तम्पुरान ने कहा—"रे, उतना ज्यादा धान नहीं हुआ है। देखने में कृषि अच्छी जरूर थी। लेकिन वास्तव में उपज बहुत मामूली हुई है।"

"फिर भी पारसाल से ज्यादा ही हुई है।"

"वैसे ही तुम्हारी आमदनी में भी कोई कमी नहीं की गई है। तुम्हें भी मैंने अपने दूसरे दासों-जैसा ही माना है। तुमने एक साल ही काम किया है, ऐसा विचार रखकर तुम्हारा हिसाब नहीं किया गया है।"

कोरन को और भी बहुत-कुछ कहना था····।

तम्पुरान ने सबसे पूछा—"अच्छा, हिसाब के मुताबिक तुम लोगों को जो मिलना है, सो अभी चाहिए या बाद में लेना काफी है?"

सब उसी समय चाहते थे।

औसेप्प ने उनकी भलाई चाहने वाले अभिभावक का रूप अख्तियार किया और कहा—"सब लेकर अभी पीकर, कपड़ा खरीदकर, शादी में और इधर-उधर की बातों में फूँक ही देना है न? उसके बाद भुखमरी में समय काटोगे। यह दूसरों से कैसे देखा जायगा? तुम सब-के-सब गये-गुजरे हो। कहाँ सुधरोगे?"

सबने कहा कि उस समय धान लेकर कोई भी उसे अनावश्यक बातों में नहीं फूँकेगा। सिर्फ कोरन ने कुछ जवाब नहीं दिया। उसको लगा कि उपदेश देने का उन्हें कोई अधिकार नहीं है। उनका उपदेश भी बिलकुल स्वार्थ-रहित नहीं है।

औसेप्प भीतर जाकर लौट आए। शमयल को बुलाकर कुछ करेन्सी नोट गिनकर दिये और कहा—"यह दस का, यह पाँच का, यह दो का है। सुना न? गलती न हो।"

पत्रोस, इट्याती, ओलोम्पी सबको एक-एक करके बुलाकर उनको भी दिया। दर्द-भरे दिल से यह सब देखते खड़े हुए कोरन की भी बारी आई। उसके दिल का दर्द इस तरह फूट पड़ा—"मुझे नोट नहीं चाहिएँ, मैंने पुंचा-खेत में काम किया है। धान भी खूब पैदा हुआ है।"

उन शब्दों में हक माँगने वाले का जोर और एक छिपी ताकत का

तेज था। ऐसा लगा कि मानो वह कुछ निश्चय कर चुका है।

औसेप्प मापिला[1] ने गुस्सा नहीं दिखाया। यह एक अचरज की बात थी। वे हँस रहे थे। पूछा—"रे, धान लेकर क्या करेगा? बता तो सही!"

"मुझे झोंपड़ी बनानी है।"

"तो धान बेचकर ही न बाँस ओला[2] आदि खरीदेगा?"

कोरन जरा विचलित हुआ। औसेप्प ने आगे कहा—"यह धान दूसरों के हाथ बेचने के बदले हमारे ही हाथ बेचा, ऐसा मान ले। धान यहां रहे तो तुम्हीं लोगों के काम आयगा। आषाढ़ से तुम लोगों को मजदूरी में धान ही मिलेगा। इस साल यहाँ धान कम है। सरकार ने सब ले लिया है।

शमयल-पत्रोस आदि सबको तम्पुरान का कहना ठीक जँचा। लेकिन कोरन को विश्वास नहीं हुआ। उसे अपना विरोध प्रकट करना था। बिना प्रकट किये रहना असम्भव था। उसने पूछा— "किस भाव से लेंगे तम्रा?"

"जो निश्चित दर है।"

"यानी!"

"यह हम नहीं तय करते। सरकार ने दर निश्चित की है। वही दर ठीक है। उससे अधिक या कम पर खरीद-बिक्री करना कानून के खिलाफ़ है। जेल जाना पड़ेगा।"

"डेढ़ रुपया ही तम्रा?"

"वह तो स्टैण्डर्ड पसेरी का दाम है। हमारी देशी पसेरी के लिए तो सवा रुपया ही मिलेगा।"

---

१. मापिला=ईसाई वर्ग का द्योतक शब्द।

२. ओला=नारियल के पत्ते को ओला कहते हैं। इसकी चटाई बनाकर घर का छप्पर और टाट वगैरा बनाते हैं।

"अब तो तीन रुपया पसेरी दाम है ।"

"रे, चुप, चुप, जेल जाना पड़ेगा !"

इसमें भी 'हाँ' में 'हाँ' मिलाने के लिए उसके साथी तैयार थे।

औसेप्प ने कहा––"यह लो, कोई रास्ता निकाल देंगे ।"

कोरन ने मन मसोसकर संतोष कर लिया ।

सोलह

चिरुता बड़े आग्रह से कहती है कि वहाँ घर बनाकर नहीं बसना है। पुष्पवेली की ज़मीन में ही नहीं उस प्रदेश में भी कोई काम नहीं चाहिए। वहाँ से चले जायँ। कहीं भी चले जायँ।

"हम कहीं भी चले जायँ"—यह एक डर के कारण वह बार-बार बच्चे की तरह कहने लगी। चारों तरफ से मानो उसे डराने वाला कुछ है। रात-दिन उसे डर समाया रहता है।

लेकिन कोरन को वहाँ छोड़कर और कहीं जाने का उसका मन नहीं है। इसलिए नहीं कि पुष्पवेली के लोगों से उसे कोई खास ममता है। वह एक परया है। परया का काम खेती करना है। कहीं भी जाय, वही काम करना होगा। तब जान-पहचान के लोगों के बीच में ही अच्छा है न? इतना ही नहीं, उसने पानी में से उठाकर एक घर लायक जमीन भी ठीक कर ली है। वह कितने महीने की मेहनत से तैयार हुई है। उसे वह छोड़कर नहीं जाना चाहता। दूसरी जगह जाने पर भी घर के लिए ज़मीन तो

उठानी ही पड़ेगी।

चिरुता ने हठपूर्वक कहा—"मैं यहाँ नहीं रह सकती।"

"क्यों री ?"

"नहीं रह सकती। यहाँ रहने में नुकसान है !"

"क्या नुकसान है ?"

"ऐसा ही है।"

उसके कहने का मतलब सिर्फ मरिया जानती थी। कोरन से उसने कुछ नहीं कहा। दोनों औरतों में आँखों-आँखों में कुछ इशारा हुआ।

कोरन ने मरिया से पूछा—"इसके ऐसा कहने का मतलब क्या है ? या तो यह इसका एक हठ है या मन में कुछ जरूर छिपा रही है।"

मरिया ने जवाब नहीं दिया।

चिरुता ने कहा—"मैं कहती हूँ कि····"

उसने मरिया की ओर देखा। मरिया ने आँखें मिचकाकर इशारा किया। उसे डर लगा कि कहीं चिरुता अपने डर की बात कह न दे। तब मामला बिगड़ जायगा।

चिरुता ने कहा—"पुष्पवेली तम्पुरान के साथ हमेशा अनबन रहती है। तम्पुरान और उनके लड़के सब खराब हैं, बड़े लालची और शैतान हैं। इस साल यहाँ रहेंगे तो जरूर मार-पीट हो जायगी। इसलिए मैंने कहा कि यहाँ से चले जायँगे।"

मरिया को सन्तोष हुआ कि चिरुता ने अक्ल से बात घुमाकर बता दी।

पत्रोस, जो बैठा-बैठा यह सब सुन रहा था, बोला—"तुम ऐसा मत कहो चिरुता ! मैं यह नहीं मान सकता। इस प्रदेश में ही नहीं आस-पास भी कहीं इतने अच्छे तम्पुरान नहीं मिलेंगे। दूसरी जगहों में काम करने वाले लोगों को लोग पीट-पीटकर मार डालते हैं। जानती हो ?"

चिरुता कहती रही कि वे सब पिशाच हैं।

जब कोरन और पत्रोस बाहर चले गए तो मरिया ने चिरुता से कहा—"तू क्या कह रही है बेटी ? कहीं भी जाओ, यही हालत है। कहीं और इससे भी ज्यादा मुसीबत आ सकती है। हर जगह छोटे तम्पुरान लोग जवान सुडौल परयी और पुलयी लड़कियों की ताक में रहते हैं। यही अच्छा है। एक कहानी सुनोगी ?"

मरिया, जो-जो कहानियाँ उसे मालूम थीं, सुनाने लगी। मालिक लोगों के द्वारा परया और पुलया-लड़कियों के चरित्र-भंग की कहानियाँ ! वे मालिक लोग कौन हैं ? मरिया ने कुछ प्रसिद्ध घरानों के नाम सुनाये। वे वहीं के छोटे मालिक लोग हैं। इनमें नायर, ईपवा[1], ईसाई और मुस्लिम सब हैं। चिरुता डर गई। एक परयी या पुलयी का चरित्र, जिसे एक टूटी-फूटी झोंपड़ी में सोना पड़ता है, कैसे सुरक्षित रह सकता है ? इसका क्या निश्चय है कि उस पर एक ही ने नजर लगाई है ?

मरिया ने आगे सुनाया, "मेरी जवानी के दिनों में किसी परयी या पुलयी को उसके पति को छोड़कर और किसी ने छुआ तक नहीं। लेकिन आज की लड़कियों की नजर भी तो छोटे मालिकों की तरफ़ लगी रहती है।

चिरुता ने कहा—"मुझे डर है कि वह फिर आयगा।"

कोरन ने झोंपड़ी बनाने के लिए बाँस और ओला वगैरा सब खरीद लिए। शमयल पत्रोस, ओलोम्पी आदि सबने मिलकर छै खम्भों के सहारे एक कोठरी वाली झोंपड़ी खड़ी कर दी। छप्पर का काम हो चुकने पर मालूम हुआ कि चारों ओर टाट लगाने के लिए बाती और ओला नहीं बचे और खरीदने के लिए पैसे भी नहीं रहे। फिर भी रस्सी

---

१. ईपवा=एक अवर्ण हिन्दू वर्ग।

में ओले का एक-एक टुकड़ा बाँधकर चारों तरफ़ पर्दे की तरह लटकाकर काम निकाला गया। ज़रा भी हवा चलने पर वह सब डोलता रहता था।

इस तरह की बेपर्द झोंपड़ी में रहने से चिरुता ने इन्कार कर दिया। उसने साफ कह दिया कि वह उस झोंपड़ी में नहीं आयगी। कोरन को गुस्सा आया। चिरुता जैसा चाहती है वैसा चारों ओर मज़बूत टाट लगाकर और भीतर से किल्ली लगाकर बन्द करने वाला दरवाज़ा लगा हुआ घर कैसे बनाया जा सकता है ? कितने ही परिवार पुंचा-खेत के बाँध पर ही मचान बनाकर गुज़र करते हैं।

कोरन ने पूछा—"धनकोठी-ओठी लगाकर घर बनाने के लिए उसमें रखने के लिए क्या है ? कोई खजाना धरा है, जिसके चोरी चले जाने का डर है ?"

चिरुता ने पूछा—"बे-पर्द घर में एक औरत कैसे रह सकती है ?"

"वाह ! पर्दा न होने से क्या कोई आकर तुम्हें पकड़ ले जायगा ?"

"वह भी क्यों नहीं हो सकता ? बाढ़ के दिनों में खेत में से घड़ियाल ही आकर उठा ले जा सकता है।"

"वाह, वाह, घड़ियाल ही आकर उठा ले जायगा !"

झोंपड़ी के चारों तरफ टाट बाँधकर तैयार करने के बाद ही उसमें आना ठीक है। मरिया ने भी चिरुता के हठ का समर्थन किया। उसने आगे कहा—"औरतों को सुरक्षित बन्द घरों में ही सोना चाहिए। यही कायदा है।"

इस तरह झोंपड़ी ठीक करने के लिए दस-बीस रुपये और लग जायँगे। इसके लिए तम्पुरान से फिर कर्ज लेना पड़ेगा। जैसे भी हो, उसका अपना अलग घर होना जरूरी था।

कोरन औसेप्प से मिला। पहले की तरह कोरन से दस्तखत कराकर औसेप्प ने उसे नकद दस रुपये और दस रुपये के ओले दिए। तब

कोरन से साफ़ कह दिया, "इन बीस रुपयों के लिए अगले साल तेरी आमदनी से बीस पसेरी धान लूँगा । अभी ही कहे देता हूं । तू तो हिसाब पूछने वाला है न ? इसलिए पहले से ही कह देना ठीक है ।"

कोरन ने कुछ जवाब नहीं दिया । कितना भी कम हो जाय, अगले साल फागुन-चैत में धान का दाम कम-से-कम तीन रुपया पसेरी जरूर होगा । यह बात भी उसने सोची । लेकिन···लेकिन·········· ।

अच्छा दिन देखकर एक दिस पत्रोस के घर से कोरन और चिरुता अपनी झोंपड़ी में गये । कोरन ने सोचा कि गृह-प्रवेश के उपलक्ष में अड़ोस-पड़ोस के लोगों को बुलाकर उनका कुछ सत्कार करना जरूरी है । उसके लिए कोरन ने पुष्पवेली तम्पुरान से काम करके चुकाने का ऋण लेने का निश्चय किया ।

पत्रोस ने कहा––"इस तरह का ऋण लोगे तो फागुन-चैत्र में हिसाब करते समय क्या करेंगे ?"

कोरन ने जवाब नहीं दिया । उसके चेहरे से एक दृढ़ निश्चय प्रकट हो रहा था । उसके मुंह से सिर्फ 'उँह' निकला, मानो वह उसके दृढ़ निश्चय का सूचक था । शमयल, पत्रोस आदि सब ने अपनी राय प्रकट की, "इस लड़के को कर्ज लेने में ज़रा भी संकोच नहीं होता ।"

कोरन ने जवाब दिया कि पुष्पवेली तम्पुरान जितना भी कर्ज देंगे (उतना) लेने में उसका हाथ नहीं काँपेगा । इतना ही नहीं, वह फिर भी कर्ज माँगने को तैयार है ।

उसकी बेफिक्री अचरज पैदा करने वाली थी । कल्पना के बाहर की बात थी । तीन बार करके जब वह तीस रुपया और लाया तब चिरुता चौंक पड़ी, "क्या सोचकर यह कर्ज पर कर्ज लेते जाते हो ?"

चिरुता की घबराहट देखकर कोरन हँस पड़ा और हँसते-हँसते उसने कहा—"तुम क्यों डरती हो ?"

"कर्ज लेते हो तो चुकाना भी होगा न ?"

"जब होगा तब होगा।"

"वाह ! कैसी बात है ! न, न, ऐसा मत करो ! जो है उसीमें गुजारा कर लेंगे।"

कोरन के जवाब ने एक नया रुख पकड़ा, "री, यह धन और धान, सब वे कहाँ से, आसमान से लाए हैं ?"

"उनके काम का फल है।"

"किनके ? उन्होंने कोई काम नहीं किया। हमी लोगों ने मेहनत करके उनके लिए धान पैदा किया है। क्या उन्होंने पीटने का जो काम किया, वही काम ?"

"कैसी पागलपन की बातें करते हो !"

कोरन ने अपने बन्धु-मित्रों के लिए एक बढ़िया भोज का इन्तजाम किया। उस भोज में चात्तन भी आया। इस तरह कोरन और चिरुता अपने नये घर में रहने लगे।

सिर पर कर्ज हो जाने पर भी चिरुता को एक अभिमान और नया उत्साह मालूम हुआ। उसके पास अब एक अपना घर हो गया। उपास ही क्यों न करना पड़े, शाम को आराम से लेटने के लिए अपना एक घर तो हो गया।

उसको पूरे घर का रूप देने के लिए उसमें अभी बहुत-कुछ करना बाकी है। अभी तो उसमें सिर्फ दो हाँड़ी, चार मटका और चटाई, इतना ही सामान है। पर उधर कर्ज तो नाक तक चढ़ गया है।

एक दिन चिरुता कोरन की गोद में सिर रखकर लेटी थी। कोरन हँसिए की सहायता से उसके बालों मे जूँ निकाल-निकालकर मार रहा था। उसने कहा—"मुझे एक और काम करना है।"

चिरुता ने पूछा—"क्या काम करना है ?"

"वही काम।"

चिरुता ने आँख उठाकर कोरन की ओर देखा। उसकी आँखों में कैसी ज्योति है ? कोरन ने अपना सिर नीचा किया। चिरुता ने अपने दोनों हाथ कोरन के गले में लपेट लिए। दोनों के अधर एक चुम्बन में मिल गए।

कोरन ने पूछा—"अपनी चिरुता को आलप्पुषा जाकर सिनेमा दिखाना है न ?"

एक छोटी बच्ची की-सी खुशी के साथ चिरुता ने 'हाँ' कर दी।

"आलप्पुषा जाना है तो एक-एक अच्छा ब्लाउज़ और अच्छा कपड़ा चाहिए।"

यह एक नया सवाल था ! एक नहीं, कई सवाल; जिनकी कोरन को कोई कल्पना नहीं थी। नया ब्लाउज़ और अच्छा कपड़ा पहनकर सज-धजकर निकलेगी तो ?......

चिरुता ने पूछा—"यही ब्लाउज़ और कपड़ा पहनकर जाऊँ, तो क्या हर्ज ?"

"यह गंदा है न ?"

"काफ़ी है। यही पहनना काफ़ी है।"

मरिया के शब्द उसके कानों में गूँजने लगे। 'सुडौल तगड़ी परयी और पुलयी लड़कियाँ जब सज-धजकर निकलती हैं तब....'चाको का घूरना उसे याद आ गया। वह घबराकर बोली, "मुझे एक पुराने ढंग की परयी की तरह रहना अच्छा लगता है। यह पुराना काला कपड़ा

पहनकर रहूँ तो प्यार नहीं करोगे क्या ?"

चिरुता ने निष्कपट भाव से ही यह पूछा था। वह ऐसे रहेगी तो पति का प्रेम कायम नहीं रहेगा······यह एक और नया सवाल !

कोरन ने उस सवाल का जवाब एक चुम्बन से दिया। चिरुता ने आगे कहा—"मुझे सज-धजकर शृंगार करने की जरूरत नहीं है। मुझे देखने वाला एक आदमी है। मैं इसी तरह रहूँ तो भी वह मुझे प्यार करेगा। मुझे····मुझे····"

उसने आगे नहीं कहा। लेकिन उसकी आँखों ने उसकी इच्छा प्रकट की।

कोरन ने उत्सुकता से पूछा—"मेरी चिरुता को क्या चाहिए ?"

"मुझे····मुझे····"

"क्या है री ? बोलो न !"

"मैं माँ बनना चाहती हूँ।"

कोरन हँस दिया। चिरुता लजा गई।

सत्रह

उस साल पहली बाढ़ के दिन बीत गए। कुट्टनाट के परयों और पुलयों के पास जो था, सो सब खत्म हो गया। सब एक-न-एक तम्पुरान के ओणप्पणी में शामिल हो गए।

पुष्पवेली औसेप्प को एक एकड़ जमीन पानी में से उठाकर घर बनाने लायक करनी थी। उस साल का वह उनका एक खास काम था। हर दास को एक-एक नाव देकर वह काम भी शुरू करा दिया गया।

पहले दिन के काम के बाद सब काम करने वाले मजदूरी के लिए पुष्पवेली में इकट्ठे हुए। बारह आने के हिसाब से मजदूरी दी गई।

कोरन को रात को खाना खाना है तो धान लेने से ही काम चलेगा। उसने कहा—"तम्प्रा, दास को धान देना काफी है, पैसा नहीं चाहिए।"

एक ही जवाब से औसेप्प ने इस प्रार्थना को ठुकरा दिया, "धान नहीं है! शैतान अभी धान लेकर कहीं जाकर चोर-बाजार में बेचना है?'

"नहीं तम्मा, अपने खाने के लिए ही चाहिए ।"

"जा, जा !"

बाकी सब मजदूर बिना कुछ कहे ही घर जाने के लिए अपनी-अपनी नावों में जा बैठे । कोरन के वहाँ अकेले खड़ा रहने से फायदा क्या ? वह भी चला गया ।

उस रात को वह पैसा लेकर चावल खरीदने के लिए दूकानों और घरों में घूमता रहा । चावल सब जगह था । लेकिन लोग एक सेर का दाम डेढ़ रुपया बतलाते थे । इतना मंहगा कैसे खरीदे ? खरीदे भी तो आध सेर चावल से क्या होगा ?

रात को इस तरह जब वह चावल खरीदने की फिक्र में घूम रहा था तब गहरे अंधेरे की ओट में घटने वाली कुछ बातें भी उसे देखने को मिलीं । एक बड़े किसान के घर के सामने घाट पर जहाज की बड़ी-बड़ी नौकाएँ पड़ी थीं । उस घर से धान के बोरे-के-बोरे उन नौकाओं में डाले जा रहे थे ।

उनमें से एक सेर धान भी उसे मिल जाता तो ! उसने उस दिन दोपहर को पुष्पवेली में कञ्जी पी थी । लेकिन बेचारी चिरुता को वह भी नहीं मिली थी । कोरन सोच में पड़ गया । चिरुता उसकी प्रतीक्षा में बैठी होगी । उसको लगा कि आधा सेर चावल मिल जाय तो वह भी कुछ खा सकती है ।

कोरन की समझ में अब यह बात आ गई कि औसेप्प क्यों मजदूरी में धान नहीं देते । धान का दाम खूब बढ़ा हुआ है । इसी तरह उनके यहाँ भी रातों-रात खरीद-बिक्री खूब चलती होगी । कोरन के मन के सामने चावल न मिलने से होने वाले उपवास के लम्बे, बहुत लम्बे दिन दिखाई देने लगे । इस तरह धान का दाम जब तक अधिक रहेगा, पुष्पवेली से मजदूरों को धान नहीं मिलेगा, यह निश्चित था ।

वह रात को इस व्यापार की बात को प्रकट कर दे तो क्या हर्ज है ? मजदूरी में धान नहीं मिले तो काम पर ही न जाय।······कोरन ने सोचा। वह अपने साथियों को जानता था। वे सब काम पर जायेंगे। वह अकेला पीछे पड़ जायगा।

आधी रात के बाद छः आने में पाव भर चावल और डेढ़ आने को मरचीनी लेकर कोरन घर पहुँचा। चिरुता सोई नहीं थी। दरवाजा सावधानी से बंद करके वह भीतर बैठी इन्तजार कर रही थी। घाट पर नौका लगने की आवाज सुनते ही उसने उत्सुकता से पूछा—"कौन है ?"

"री मैं हूँ !"

चिरुता समझ गई। उठकर उसने दरवाजा खोला। आज आधी रात के बाद चूल्हे में आग जली और उस झोंपड़ी में रोशनी का प्रकाश हुआ। पेट ठीक नहीं है कहकर कोरन लेट गया। जब कन्जी तैयार हुई तब चिरुता ने कोरन को उठाया। उसे थोड़ा खिलाने पर ही उसे सन्तोष होगा। कोरन ने अस्वस्थता का बहाना करते हुए कहा, "मैं नहीं खाऊँगा।"

"तो मैं भी नहीं खाती।"

"मेरे पेट में दर्द है।"

चिरुता ने थोड़ा खाने के लिए ज़ोर दिया। आखिर उसकी बात कोरन को माननी पड़ी। चूल्हे की बुझती हुई रोशनी में एक मिट्टी की कड़ाही में पति-पत्नी साथ-साथ कन्जी लेने बैठे।

चिरुता ने कहा—"क्यों सिर्फ दिखाने के लिए खा रहे हो ?'

"नहीं री, मैं खा रहा हूँ।"

कन्जी में से एक हिस्सा चिरुता ने निकालकर अलग रख दिया था। कोरन ने वह देख लिया।

"री, वह छिपाकर क्यों रखा है ?"

चिरुता हँस पड़ी। प्रेम से उसकी ठुड्डी को हिलाते हुए कोरन ने

पूछा—"यह क्यों रखा है ? पाव-भर चावल ही तो बनाया है ! लेकर पी लो !"

"कल दोपहर के बाद ही तो पाव-भर कञ्जी पीने को मिलेगी। सवेरे थोड़ा पीकर जा सकते हो।"

"ना, मुझ नहीं चाहिए। तुमने दिन-भर कुछ भी नहीं खाया होगा।"

"मेरा तो पेट भर गया। कल सवेरे पीते समय कड़ाही में एक घूँट मेरे लिए छोड़ देना। वह काफ़ी है।"

पेट-भर खाना न मिलने पर भी दोनों सो गए। कोरन के बलिष्ठ शरीर का आश्रय पाकर चिरुता निर्भय और निश्चिन्त भाव से सोई। इतने में 'कुकुड़ूँकूँ-कुकुड़ूँकूँ' करके करके मुर्गे ने प्रभात के आगमन की सूचना दी।

सवेरे, बाकी बची कञ्जी और भाजी की बात पति-पत्नी के बीच एक और झगड़े का कारण बनी। इसलिए नहीं कि चिरुता ने सब खा लिया, पर इसलिए कि वह जोर दे रही थी कि पूरा पति ही खाये।

उस दिन भी कोरन ने धान माँगा। लेकिन मजदूरी में एक रुपया मिला। इधर-उधर ढूँढ़कर आधा सेर चावल और मरचीनी खरीदकर जब वह घर लौटा तब घर में किसी की बात-चीत सुनाई पड़ी।

बात करने वाला उसका बाप था—उसका रूठा हुआ बाप। वह बिलकुल बदल गया—जैसा दीखता था। मिट्टी के तेल के दिये के सामने बैठकर वह चिरुता से बातें कर रहा था। कोरन ने बाप को चिरुता से बेटी कहकर बातें करते सुना। उसकी आँखों में आनन्दाश्रु उमड़ आए।

"बाबू, बाबू," पुकारता हुआ कोरन भीतर घुसा।

"बेटा !"

बाप-बेटा एक गाढ़ आलिंगन में बँध गए। यह दृश्य देखकर चिरुता का दिल आनन्द से भर गया।

बूढ़े का सारा शरीर ठण्ड से सूज गया था। वह उठ भी नहीं सकता था। लेकिन बेटे को देखकर वह आनन्दित होकर खड़ा हो गया। पैरों के काँपने से वह गिरने वाला ही था कि कोरन ने उसे पकड़ लिया और पूछा—"यह क्या हो गया है बाबू ! सारा शरीर सूजा हुआ है।"

"हाँ, बेटा, अब ज्यादा दिन बाकी नहीं हैं।"

कोरन ने सहारा देकर बाप को धीरे से बिठाया।

बूढ़े ने कहा—"चावल का पानी पिये दस दिन हो गए हैं। मरचीनी पर ही गुजारा कर रहा था। इसी कारण यह हालत हो गई बेटा ! जिनके पास धान है वे बाहर दिखाते तक नहीं। रात को सात रुपये के भाव से बेचते हैं।"

बूढ़े ने अपनी ढोली लुंगी कसी। बाप को उस हालत में देखकर कोरन की आँखों से आँसू गिरने लगे। आज वह उठकर खड़ा भी नहीं हो सकता।

अपने अपराध का खयाल आते ही उसका दिल फटने लगा। उस बूढ़े को तकषी[1] में अकेले छोड़कर वह अपने सुख के पीछे पड़कर चिरुता के साथ दूसरी जगह में रहने लगा है। कैसा अक्षम्य अपराध किया है उसने ? उसका ऐसा करना किसी भी हालत में उचित नहीं माना जा सकता। उस बूढ़े ने कितना कष्ट सहकर उसे पाला-पोसा था। रूठे रहने पर भी आज वह उसकी—अपने बेटे की खोज में निकलकर यहाँ पहुँचा है। उसके अलावा और कौन है उस बूढ़े का ? ····किसी बात का निश्चय कर लेने पर उससे वह तिल-भर भी हटने वाला नहीं था। उसके साथ रहता तो वह इस अवस्था को नहीं पहुँचता।

अब इस अवस्था में वह फिर उठकर खेत के बाँध पर नहीं जा सकेगा।

---

१. तकषी=एक गाँव का नाम।

एक बाँध पर खड़े होकर दूर दूसरे बाँध पर खड़े आदमी तक अपनी आवाज पहुँचाकर पहले की तरह अब वह पुकार भी नहीं सकता। उसके फेफड़े में अब वह ताकत नहीं रही। आखिरी दिन अपने बेटे के यहाँ बिताने के लिए वह ढूँढ़ता-ढूँढ़ता वहाँ पहुँचा था। कञ्जी मिलनी चाहिए, यही उसकी आखिरी इच्छा थी।

उसने एक दस हजार पसेरी वाली जमीन के किसान के यहाँ अपनी आठ साल की उम्र से काम करना शुरू किया था। उसके बाद उस किसान का करोड़पति होना, फिर सर्वनाश होना, दुबारा उन्नति करना, सब हुआ। कितने करोड़ पसेरी धान उसने अपने जीवन-काल में पैदा किया होगा। कितना काटा, कितना मीड़ा, और कितने करोड़ों के पेट अपनी मेहनत के अन्न से भरे होंगे!

इस आदमी ने जीवन में जन साधारण के लिए क्या-क्या भेंट नहीं की। आज वही साँस की 'घर-घर' आवाज़ में अपने जीवन की अंतिम घड़ियाँ गिन रहा है। भात से निकाला हुआ पानी मिले भी उसे दस दिन हो गए हैं। उसने जो धान पैदा किया वह सब दूसरों के लिए ही था।

बूढ़े ने पूछा—"बेटा, तुम लोगों को यहाँ मजदूरी में धान मिलता है न?"

पास में बैठे बाप की पीठ दबाते हुए कोरन ने कहा—"ना बाबू, धान बाहर कहीं देखने को भी नहीं मिलता। कल रात को पाव-भर चावल खरीदा था। आज बारह आने में आधा सेर खरीदकर लाया हूँ।"

चिरुता से कोरन ने पूछा—"री, बाबू को दिया या नहीं?"

एक मुस्कुराहट के साथ चिरुता ने जवाब दिया, "क्या था देने को? मैंने कल एक सूप बुनकर रखा था। उसे बेचकर साढ़े तीन आने के पैसे का चावल लेकर आ रही थी। तभी बाबा आए। उस चावल की कञ्जी बनाकर हम दोनों ने पी ली।"

बूढ़े ने उसके बयान के आखिरी हिस्से का खण्डन किया।

"दो-तीन छटाँक चावल डालकर कन्जी बनाई तो थी, लेकिन उसे खत्म मैंने ही किया है। इसने जरा भी नहीं पी। सब मुझे ही पिला दी।"

चिरुता खुश थी। उसने कहा—"बाबा यों ही कह रहे हैं। मैंने भी पी ली है।"

बूढ़े ने चिरुता की ओर देखकर कोरन से शिकायत की, "बेटा, यह कैसी सुडौल सुन्दर दीखने वाली लड़की थी। अब हड्डी-ही-हड्डी रह गई।"

कोरन ने अपना कसूर मान लिया। बात ठीक ही है। शादी के पहले वह कितनी मोटी और तन्दुरुस्त दिखती थी।

कोरन ने कहा—"वह दूसरों को खिलाती है और खुद सूखती जाती है।"

"हाँ, हाँ, आज मैंने देख लिया," बूढ़े ने बेटे के समर्थन में कहा।

आध सेर चावल और मरचीनी से उस रात को उस छोटे परिवार का गुजारा हुआ। कोरन की जिन्दगी में वह एक स्मरणीय दिन था। अपनी मजदूरी से बाप का एक दिन का कर्ज तो आज उसने चुकाया।

पौन पाव चावल की कन्जी बूढ़े ने ली। ज्यादा लेने की इच्छा थी, लेकिन ले नहीं सकता था। अरक्कल-घर में जब उसे एक कढ़ाई-भर भात मिलता था, तब वह चार मुट्ठी में खत्म कर देता था। अब चार घूँट ही उसके लिए काफ़ी जान पड़ा। उसने डकार ली। कोरन को सन्तोष हुआ।

चिरुता ने दूसरे दिन सवेरे के लिए थोड़ा रख लिया। कोरन ने विरोध नहीं किया। जैसे भी हो, दूसरे दिन वह धान ही मजदूरी में लेगा, ऐसा उसने निश्चय किया। बाँबू को कम-से-कम एक बार तो भर-पेट खिला देना है। वही उसकी एक-मात्र अभिलाषा थी।

उस दिन शमयल, इट्यातो आदि सबने कोरन की राय का समर्थन किया। उनके घरों में भी पिछले दिन खाना नहीं पका था। चावल किसी के पास भी नहीं था।

लेकिन गरीब परयों और पुलयों की इच्छाएं भी कहीं पूरी होती हैं? एक-एक रुपया उनके सामने फेंककर औसेप्प ने गम्भीर भाव से कहा—"चाहिए तो ले जाओ! यहाँ धान नहीं है। काम नहीं करना है तो कर्ज चुकाकर जा सकते हो।"

किसी ने भी रुपया नहीं लिया। औसेप्प गुस्से में बोल उठे, "सब को·······मैं कहे देता हूं। सब-के-सब कल निकल जाओ! उपवास में दिन बिताने का जमाना है। काम देकर मजदूरी देना काफ़ी नहीं है? शेखी दिखलाते हैं।"

पिछले दिन उपवास में जो समय बिताना पड़ा था। शमयल रुपया उठाकर चला गया। फिर दूसरों ने भी वसा ही किया।

अठारह

कुट्टनाट में कहीं भी मजदूरी में धान नहीं मिलता था। ऐसा लगता था कि सब खेत-मालिकों ने मिलकर कोई गुप्त निश्चय कर लिया है।

सब परया और पुलया पीड़ित थे। सबने एक दिन कोरन से उसके घर पर मिलने का निश्चय किया।

"रे, हम सब मिलकर रहें तभी तो काम पड़ेगा। तम्रा सब मिलकर एक हो गए हैं।" यह बात बिना किसी के समझाये हुए एक बूढ़ी परयी ने कही।

"उस नौका-विहार के दिन जिस युवक ने गरीबों की बात लेकर भाषण दिया था, उसे बुलाया जाय," किसी ने यह राय दी।

तय हुआ कि यह बाद को किया जाय।

उस रात को करीब साठ परये इकट्ठे हुए। प्रत्येक ने अपनी-अपनी शिकायतें सुनाईं। सबने संगठित होकर रहने का निश्चय किया। इतने

परया इकट्ठे हुए हैं, यह देखकर उन्हें भी लगा कि उनमें भी शक्ति है, वे भी कुछ कर सकते हैं, विरोध कर सकते हैं। कोरन का बूढ़ा बाप भी लाठी के सहारे खड़ा हो गया।

अगले रविवार को नरेन्द्र नामक एक परया-युवक की अध्यक्षता में एक सभा की गई; लेकिन किसानों ने उस सभा का उद्देश्य नहीं समझा।

पानी में डुबकी मार-मारकर कोंदों निकालकर काम करने वाले, आँधी-पानी, धूप-ठंड सब बर्दाश्त करके काम करने की शक्ति रखने वाले परयों और पुलयों को आज भूख लगी थी। प्रकृति की शक्ति को भी अपने वश में करने वाली उनकी शक्तियाँ कैसे जागृत की जा सकती हैं, यह पहले उन्हें मालूम नहीं था।

तम्पुरानों ने सोचा, उस सभा का कानून की नजर में क्या मोल है? अध्यक्ष कौन था। कहीं का एक परया युवक। सुनने में आया कि कुछ प्रस्ताव भी पास हुए। किसने प्रस्ताव रखा, किसने समर्थन किया? इस तरह की अनौपचारिक सभा का क्या महत्त्व? व्यर्थ की सभा!······ ऐसा सोचकर तम्पुरान लोग हँस पड़े।

लेकिन उस रात को एक घटना घटी। उस ताल्लुके के एक प्रमुख स्टेट-कांग्रेस-नेता के घर से खरीदे हुए धान के बोरों की एक नौका को उस सभा के कुछ परयों और पुलयों ने मिलकर पकड़ लिया।

संगठित हो जा जाने पर परयों और पुलयों की जबान भी खुल गई। जब मालिक लोग कहते कि वे उनकी ज़रूरतें पूरी करेंगे और मजदूरी उदारता पूर्वक देंगे, तब वे जवाब भी देने लगे।

कोरन के बाप को लगा कि वह एक बड़े झगड़े की शुरूआत है। इसमें कोरन का प्रधान हाथ था। मालिक लोगों का क्रोध उसी पर

था। भगवान् जाने क्या होने जा रहा है!

बूढ़े को अपनी जवानी की बात याद आई। उन दिनों उपज का एक हिस्सा काम करने वालों का हुआ करता था। मालिक लोग दासों को किसान के परिवार के अंग-जैसा ही मानते थे। उन दिनों भी काम करने वालों को शिकायतें थीं। फिर भी हालत आज से कई गुनी अच्छी थी।

बूढ़े की एक ही प्रार्थना थी। कोरन को कुछ हानि न पहुँचे। बेटे को कुछ हो, इसके पहले ही उसका मर जाना अच्छा है। वह रोज़ कोरन को समझाता, "बेटा, तुम अपने को किसी खतरे में न डालना!"

एक दिन बूढ़े ने बढ़िया भोजन किया। उसे रोज कम-से-कम एक जून भात मिल जाता था और उसकी जरूरत के मुताबिक पान भी। एक स्थानीय वैद्य से उसका इलाज भी होने लगा।

मानत्तु-घराने का एक दास, चेन्नन के लड़के के लिए एक लड़की लाने वाला था। उस दिन चेन्नन के घर में एक सभा होने वाली थी। कोरन भी गया। चिरुता को कोरन के बिना ही एक रात बितानी थी। बूढ़ा बाप, जिसको अच्छी तरह दिखाई भी नहीं देता था और खुद उठने-बैठने में भी वह असमर्थ था, सिर्फ कुछ बातें कर सकता था। फिर भी चिरुता ने अपना डर प्रकट नहीं किया।

कोरन के जाने के दो घण्टे बाद बूढ़े को कँपकँपी शुरू हुई। वह बोलने में अशक्त हो गया। उसे साँस लेना भी कठिन हो गया।

रात के करीब आठ बजे होंगे। भाग्यवश उस दिन दिये में मिट्टी का तेल था। चिरुता बूढ़े के पास ही बैठी थी। उसका चेहरा देखकर चिरुता को डर मालूम होने लगा। वह उसके स्नेहपूर्ण ससुर के चेहरे-

जैसा नहीं दीखता था। बूढ़ा यद्यपि कुछ बोलता और चिरुता को 'बेटी, बेटी' पुकारता जाता था तो भी चिरुता को ऐसा नहीं लगा कि वह वही उसका ससुर है। यह कैसा परिवर्तन है!

थोड़ी देर के बाद उसकी बोली भी बन्द हो गई। साँस लेने की तकलीफ़ बढ़ गई। बूढ़ा मर रहा था।

चिरुता ने पुकारा। कोई जवाब नहीं मिला। थोड़ी देर की परेशानी के बाद बूढ़ा चल बसा।

चिरुता अकेली!

उसे कितना प्यार किया और उससे कितना वात्सल्य पाया। फिर भी मुर्दे के पास आधी रात के समय वह अकेली! ......उसे लगा, चारों ओर प्रेत-ही-प्रेत मँडरा रहे हैं।

कोरन इस अवसर पर एक बेटे के कर्तव्य का पालन न कर सका। जब लौटा तो वह उसके पैर पकड़कर रो पड़ा।

इस तरह रोते रहना ही काफी नहीं है? काम भी तो होना है। मुर्दा कहाँ गाड़ा जाय? घर के पास जगह काफी नहीं है। यहाँ की मिट्टी भी तो नई-नई उठाई है। जरा भी खोदने पर पानी निकल आयगा। पुष्पवेली की एक अच्छी जमीन पड़ी है जिसमें अब कोई नहीं रहता। वहाँ गाड़ा जाय तो अच्छा होगा। औसेप्प से पूछने के लिए एक आदमी चला गया।

वह लौटकर आया। औसेप्प ने जगह देने से इन्कार कर दिया। मरते वक्त यदि गिरजे में खबर दे दी गई होती तो बूढ़े की अंतिम क्रिया करके मुर्दे को गिरजे के कब्रिस्तान के पुलया-विभाग में गाड़ दिया जाता। अब भी कोरन ईसाई बनने के लिए तैयार हो जाय तो बूढ़े की लाश

लावारिश मुर्दों को गाड़ने के हिस्से में गड़वाई जा सकती है।

कोरन ने, जो बैठा रो रहा था, कहा—"गाड़ने की जगह के बारे में चिन्ता मत करो! मैंने निश्चय कर लिया है।

इस पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। फिर सब मिलकर सोचने लगे। किसी और घराने में क्यों न पूछ-ताछ की जाय। यह विचार कोरन को असह्य मालूम हुआ।

वह उठकर खड़ा हो गया। किसी ने भी नहीं समझा कि वह क्या करने जा रहा है। कोरन घाट पर पड़ी नौका पर चढ़कर उत्तर की तरफ गया। लोगों ने समझा कि वह किसी से पूछने जा रहा है।

"जो भी हो। मुर्दे को नहलाने आदि का काम समाप्त किया जाय," एक ने राय दी। बूढ़े की लाश को नहलाकर उसके माथे पर भस्म और चन्दन लगाया गया। चिरुता ने एक साफ कपड़ा निकालकर दिया। अब सिर्फ गाड़ने की जगह निश्चित होनी थी।

कोरन लौट आया। नाव में एक बड़ा पत्थर (माइल-स्टोन) था।

बाप के तैयार रखे शव से लिपटकर कोरन रो पड़ा। बाप को इतने दिनों के बाद देखकर उसका जी अभी भरा भी नहीं था कि इतने में··।

कोरन ने लाश को एक चटाई में लपेटकर बाँधा। सबने उसे ऐसा करने से रोकने की कोशिश की। कोरन ने अकेले ही उस गट्ठर को उठाकर नाव में रखा। वहाँ पर इकट्ठे हुए सब लोग अचरज में पड़ गए। इस तरह लाश गाड़ने की विधि उन्होंने नहीं देखी थी। जब उसने लाश को पत्थर में बाँधा, तो कोरन का उद्देश्य लोगों की समझ में आ गया।

कोरन ने सहायता के लिए पत्रोस को बुलाया। पत्रोस ने दूसरों की तरफ़ देखा। कोई कुछ नहीं बोला। आखिर पत्रोस भी नौका में चढ़ गया। जब नाव नदी के बीच में पहुँची, तब कोरन और पत्रोस दोनों ने

मिलकर उस भारी गट्ठर को उठाकर पानी में डाल दिया। गट्ठर पानी में डूब गया। ऊपर तीन-चार बुलबुले उठे और मिट गए! बस!

छः फीट जमीन तक न पाकर उस बूढ़े के सेवामय जीवन के इतिहास का इस तरह अन्त हुआ।

उन्नीस

विधान-सभा के चुनाव का समय है। उस प्रदेश का एक बड़ा किसान स्टेट-कांग्रेस की ओर से चुनाव के लिए खड़ा हुआ है। उसके विरुद्ध एक स्वतंत्र खड़ा है। दोनों पक्षों में खूब होड़ चल रही है।

इस होड़ के बीच खेत पर काम करने वाले मज़दूरों का एक संघ रजिस्टर कराया गया। इसमें परया और पुलया ही सदस्य बने। गरीब ईसाई, नायर और ईष़वा-मजदूरों ने इसमें शामिल होने से इन्कार कर दिया। उनका कहना था कि वह संघ परयों का है। जो स्टेट-कांग्रेस के सदस्य थे, उन्हें गिरजा, करयोगम और एस०एन०डी०पी०, श्री नारायण गुरु धर्म-परिपालन-संघ से आदेश मिला था कि वे कांग्रेस को वोट दें।

इस चुनाव में हार या जीत की बात तय करने में खेत-मज़दूर-संघ का एक जबर्दस्त हाथ है। ऐसा सब लोग अनुभव करने लगे। उसके सदस्यों की संख्या कम नहीं थी। उस संघ ने अपना निश्चय अभी प्रकट नहीं किया था।

स्वतंत्र उम्मीदवार ने खेत-मज़दूर-संघ को एक भारी रकम दान में देने की बात कही। संघ की कार्य-समिति की बैठक कोरन के घर पर हुई। नरेन्द्र ने स्वतंत्र उम्मीदवार की बात उन्हें सुनाई।

दस हज़ार रुपये। चौंका देने वाली रकम! परयों और पुलयों की भी इतनी पूछ हो सकती है! नरेन्द्र ने समझाया कि उनकी कीमत इससे भी अधिक है। एक परये की कीमत रुपया, आना, पाई में नहीं आँकी जा सकती। उस दिन की बैठक में जिस-जिसने भाग लिया, उस-उसको अपने में दुगुनी शक्ति का अनुभव हुआ।

बहुत देर तक सलाह-मशवरा करने के बाद कार्य-समिति ने उस दान को लेने से इन्कार कर दिया। सभा समाप्त होने के बाद लौटते समय प्रत्येक के दिल में यह सवाल उठा कि इतनी बड़ी रकम छोड़ देने का निश्चय कैसे हो गया। दस हज़ार रुपये! एक हज़ार नोट दस-दस रुपये के!! अपनी संगठित शक्ति पर सबको अभिमान हुआ। गरीबों में भी दस हज़ार रुपया त्यागने की शक्ति है।

'संगठित रहने पर ऐसा ही होता है,' ऐसा आपस में लोगों ने कहा। लेकिन चुनाव में उनकी क्या नीति होनी चाहिए? दस हज़ार रुपये त्याग दिये, सो ठीक। लेकिन किसको मत देना है? किसको देने से परयों और पुलयों की भलाई हो सकती है?

स्टेट-कांग्रेस की ओर से एक विज्ञप्ति निकाली गई कि कांग्रेस यदि अधिकार प्राप्त कर ले तो सबकी भलाई का काम करेगी और गरीबों की जरूरतों को पूरा करेगी।

"यह कैसे हो सकता है? तम्रा और दास—दोनों की भलाई एक साथ कैसे की जा सकती है?"

यह सन्देह सन्देह ही बना रहा।

चुनाव का दिन बड़ी चहल-पहल का दिन था। चुनाव की जगह पर

भीड़ का कोई ठिकाना नहीं। तिरंगे झंडों से सजाई हुई नौकाएँ और स्टीमर नदी और नालों में बराबर आते-जाते दिखाई देते थे। स्वतंत्र उम्मीदवार के पक्ष के लोग खूब दौड़-धूप कर रहे थे। लेकिन संघ के निश्चय के अनुसार स्वतंत्र उम्मीदवार के दास परयों ने भी कांग्रेस-उम्मीदवार को ही मत दिये।

कांग्रेस-उम्मीदवार की जीत हुई। इस जीत का उत्सव भी समाप्त हो गया। यह भी सबको मालूम हुआ कि उनके मतदान के फलस्वरूप जो महाशय जीते वे एक मंत्री बन गए।

कुट्टनाट के खेत-मजदूरों की एक सभा में नरेन्द्र ने कहा—"अब देखना है कि यह सरकार गरीबों के लिए क्या करती है।"

यह एक पूर्व चेतावनी थी।

कुट्टनाट के किसान-मालिक और पूँजीपति सब डर गए। परये और पुलये सब संगठित हो गए हैं। उस संगठन की शक्ति लोगों ने चुनाव के अवसर पर देखी थी। उस संगठन के द्वारा परये और पुलये जग गए हैं, मजबूत होगए हैं।

दो किसान जब आपस में मिलते तो पुलयों और परयों के बारे में ही बातें करते। उनको अपनी संख्या का बल है। आगा-पीछा कुछ भी उनको दीखता नहीं। उनका स्नेह-भाव समाप्त हो गया। उनकी बोल-चाल का ढंग भी बदल गया है। नई सरकार·········यह क्या करने जा रही है?·········यही सबका सवाल था।

रोज की मजदूरी के पाँच कूलियेन[1] धान में दो कूलियेन धान और

१. कूलियेन=एक छोटा माप है। पाँच कूलियेन दो सेर के बराबर होता है।

बाकी तीन कूलियेन का सरकारी दर के मुताबिक पैसा देने का नियम चालू किया गया। यह संघ की एक बड़ी जीत थी।

कोरन संघ का प्राण था। कुट्टनाट के परयों और पुलयों में उसका एक अच्छा स्थान हो गया। इससे चिरुता को भी एक तरह के अभिमान का अनुभव हुआ। मजदूरी का एक हिस्सा धान के रूप में पाने का उपाय उसके पति ने निकाला तो! उसका भी स्थान औरतों के बीच ऊपर हो गया।

जब कभी कोरन जोश में आकर परयों और पुलयों के साथ किये गए अन्यायों का वर्णन करता तब चिरुता का भी खून खोलने लगता था। जब कोरन कहता कि ये सब अन्याय अब बन्द होने चाहिएँ, तब चिरुता को लगता कि उसे उन कुकर्मों की भी सूचना दे देनी चाहिए जिनका कोरन को पता नहीं था। परयों और पुलयों के विना जाने खलिहान में पुआल के ढेरों के बीच, बड़े-बड़ खेतों की घनी हरियाली के पीछे, बीच के बाँधों और दूसरी जगहों पर होने वाले कुकर्म! इनके बारे में उनकी औरतें ही जानती थीं। इन अनाचारों का शिकार बनकर कितनी औरतों की आत्माएँ तड़प-तड़प कर कुण्ठित हो जाती हैं, यह कोई नहीं जानता। उन आत्माओं की दर्द-भरी पुकार दुनिया के अन्तःकरण तक पहुँचा सके तो। लेकिन उन दर्दनाक घटनाओं की बातें इच्छा रहने पर भी चिरुता पति से कुछ कह न सकी। कोरन से कहना उसके लिए असम्भव-जैसा लगा।

अगर परये और पुलये उन बातों को जान जायें तो वे आग लगाने और खून करने का भी काम कर बैठेंगे। चिरुता को मरिया की बात याद आई, "ये सब बातें मरदों को नहीं मालूम होने देना। उनकी जान खतरे में नहीं पड़ने पाये।"

हाँ, कुट्टनाट के परयों और पुलयों को परम्परा से प्राप्त संस्कार का

मूल आधार ही सच्चरित्रता है। उनकी पत्नी का चरित्र खतरे में है। यह यदि वे जान जायं तो उनकी आसाधारण शक्ति क्या न कर बैठे। नहीं, ये बातें नहीं कहनी चाहिएँ।······लेकिन एक नवयुवती परया एक रंगीन ब्लाउज और अच्छा कपड़ा पहनने की अपनी एक तुच्छ इच्छा को पूरा करने के साथ-साथ अपने चरित्र की रक्षा भी कैसे कर सकती है ?

चिरुता की बड़ी इच्छा हुई कि वह ऐसी अभागी बहनों से मिले और उनका परिचय प्राप्त करे। उनकी दुःखभरी कहानी उन्हीं के मुंह से वह सुन तो सके। कई बार चिरुता के मन में आया कि औरतों की भी एक सभा क्यों न कायम की जाय ?

पति के सब काम प्रशंसा के योग्य थे। लेकिन चिरुता एक स्त्री थी, पत्नी थी। उसका पति तम्पुरानों को अपना दुश्मन बनाता जा रहा था। वे सब कोरन से नाराज थे। अकेले जाते समय यदि कहीं वे उसे मारकर उसकी लाश नदी में फेंक दें तो वह क्या करेगी ? कौन कुछ पूछेगा भी ?

वह कोरन को कहीं बाहर अकेला नहीं जाने देती थी। शाम को लौटने में देर हो जाय तो वह घबरा उठती। एक-दो बार उसने कोरन से इसके बारे में कहा भी था।

बीस

एक दिन चिरुता पुष्पवेली में गई। उस दिन तम्पुरान ने उसे और कोरन को खूब डाँटा। उन्होंने कहा कि वे कोरन को एक अच्छा सबक सिखायेंगे। वे ही नहीं, सब इसके लिए तैयार बैठे हैं। उन्होंने आगे कहा—"गरीब परयों और पुलयों को गलत रास्ता दिखाकर······वह······। उसे होशियार रहने को कह देना।"

उस दिन शाम को जब कोरन आया तब चिरुता ने सब बातें उससे कह दीं। कोरन ने बेफिक्री से सब सुन लिया और जरा मुस्कराते हुए पूछा—"तुम डर गई होगी?"

बेचारी चिरुता ने कहा—"मुझे तो हमेशा डर लगा रहता है।"

उस वाक्य में जो व्याकुलता भरी पड़ी थी वह कोरन की समझ में नहीं आई। उसे चिरुता से एक महत्त्वपूर्ण बात कहनी थी। उसने चिरुता की ओर ध्यान से देखा; मानो वह यह अनुमान लगाना चाहता हो कि वह जो कुछ कहने जा रहा है उसे चिरुता मानेगी या नहीं। उसने कहा—

"चिरुता, मुझे लोग मार भी डालें तो परवाह नहीं। मरते दम तक मेरी यही कोशिश रहेगी कि परयों और पुलयों को आगे इस तरह के अत्याचार न सहने पड़ें।"

कोरन के निश्चय की दृढ़ता चिरुता समझ गई। उसने भी अपने मन में यह निश्चय कर लिया कि कोरन के निश्चय के फलस्वरूप उसके जीवन का जो कार्यक्रम होगा उसमें वह भी भागीदार बनेगी।

कोरन को और भी कहना था, बहुत-कुछ कहना था। उसने फिर कहना शुरू किया, "मुझसे एक ही मूर्खता का काम हुआ है। वही मेरे रास्ते का रोड़ा बना हुआ है।"

"वह क्या है ?"

"वह···वह है····"चिरुता के चेहरे पर दृष्टि गड़ाकर उसने पूछा, "तुम रोओगी ?"

"मैं रोऊँगी नहीं। ऐसे मैं कभी रोई हूँ ?"

"फिर भी, जब मैंने शादी की थी, तब तुमने यह कभी सोचा था कि मैं इस तरह का हो जाऊँगा ?"

"किस तरह के हो गए हो तुम ?"

"सुना, इस संघ में शामिल होकर संघ के लिए काम करने से कई तरह की आशंकाएँ हैं। सम्भव है प्राण भी देने पड़ें। ऐसा ही कार्यक्रम बन रहा है। माँ-बाप और बन्धु-बान्धवों को विरोधी बनाकर एक लड़की से शादी की। यह एक गलती थी। अब यह पैर में जंजीर-सी लगती है।"

चिरुता का उत्तर तैयार था, "मैं किसी भी काम में बाधक नहीं बनूँगी। तुम कहीं भी जाओ मैं अपने को तुम्हारे लिए भार नहीं बनने दूँगी।"

"सो तो ठीक है। लेकिन मुझे कष्ट मालूम होता है। किसी भी लड़की को लाकर उसे इस तरह कष्ट सहने देना कहाँ तक ठीक है ? शादी

के दिन जब झगड़ा खड़ा हुआ, उसी दिन शादी रोककर मुझे लौट आना चाहिए था। तब और कोई तुमसे शादी कर लेता। काम करके रोज़ की मजदूरी तुम्हें रोज़ लाकर दे देता।"

चिरुता घबराई। कोरन के शब्द कितना व्यापक अर्थ रखते हैं, यह उसकी समझ में नहीं आया। फिर भी वह डर गई पति कहता है कि उससे शादी नहीं होने चाहिए थी। यह वह कैसे सहन कर सकती थी! उसने कहा—"यह क्या कह रहे हो? रोज काम करके देते ही हो! क्या मैं कहती हूँ कि यह काफी नहीं है?"

"यह बात नहीं है चिरुता! अब रोज़ काम करके ला देना असम्भव हो गया है।"

"जब ऐसा होगा, तब उपास ही सही।"

"नहीं री, तुम एक अभागिन हो। इसीलिए मेरे साथ हो गई। यदि तुम्हारी शादी मेरे साथ न हुई होती तो तुम सुखी रहतीं, और मैं भी अपने रास्ते पर बेधड़क आगे बढ़ता।"

चिरुता उसकी बात समझ गई। वह बोली, "मैं अपनी उम्र की किसी भी परयी से अपने को अधिक भाग्यशालिनी समझती हूँ। मुझे कोई कमी नहीं है। पति मुझे प्यार करता है। शरीर से भी मैं नीरोग हूँ।"

एक क्षण बाद कोरन ने कहा—"तुम बड़ी भोली हो चिरुता! तुम समझती हो कि तुम्हारा पति हमेशा पुंचा-खेत में काम करके तुम्हारी देख-भाल करता रहेगा। लेकिन वह तो जेल जाने की बात सोच रहा है।"

चिरुता का उत्तर भी तैयार था, "तो मैं भी वही करूँगी।"

कोरन को विश्वास नहीं हुआ। चिरुता ने आगे कहा—"सभा आदि करना क्या तुम मर्दों का ही काम है? हम औरतें भी सभा करेंगी। हमारे लिए भी काम है।"

कोरन हँस पड़ा। लेकिन चिरुता गम्भीरता से बोल रही थी,

"तन्दुरुस्त जवान लड़कियों की भी रक्षा होनी चाहिए। उसके लिए मैं भी जेल जाऊँगी।"

"अरी, ऐसी पागलपन की बातें न करो! तुम्हारे लिए यही अच्छा होगा कि किसी दूसरे के साथ जाओ!"

चिरुता दुःख और क्षोभ से व्याकुल हो उठी। पति कहता है कि किसी दूसरे के साथ जाओ! वह रो पड़ी। कोरन को भी लगा कि उसे अकस्मात् उससे ऐसी बातें नहीं कहनी चाहिएँ थीं। उसने चिरुता को शान्त करने की कोशिश की।

चिरुता ने सिसक-सिसककर रोते हुए पूछा, "कहीं किसी और लड़की को तो नहीं देख रखा है तुमने?"

"छी: कैसी पागलपन की बातें करती हो?"

"तो तुमने यह क्यों कहा कि मुझसे शादी नहीं करनी चाहिए थी? और मैं किसी और के साथ जाऊँ? शायद तुम्हारी मुझे छोड़ देने की इच्छा हो रही है?"

कोरन ने यह स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि उसे इस तरह के प्रश्न का उत्तर देना पड़ेगा। वह चकराया। उसने कसम खाई और पवित्र वस्तुओं का नाम लेकर अपनी सचाई का प्रमाण दिया।

चिरुता ने पूछा, "तब तुमने अभी जो बातें कहीं थीं, क्या वे दिखावे के लिए ही कही थीं?"

एक नई समस्या! 'हाँ' या 'ना' एक शब्द में उत्तर देना असम्भव था। उसने जो कहा था सब दिखावे के लिए नहीं कहा था। इसलिए 'हाँ' नहीं कह सकता था। और यदि 'नहीं' कहता तो चिरुता का दिल टूट जाता!

उसने बातचीत का रुख बदल दिया, "मैं तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकूँगा, यही सोचकर मैंने कहा था। मेरी चिरुता, तुम कितनी परेशान हो गई हो!"

उस दिन रात-भर कोरन आश्वसित चिरुता को अपने संघ के कार्य-क्रम के बारे में विस्तार से समझाता रहा, "अब आगे का समय बड़ा भयानक मालूम पड़ता है। लड़ाई का ही सामना करना पड़ेगा। कुट्टनाट के किसान लोग ही नहीं, वरन् शासक लोग भी संघ और उसके प्रवर्त्तकों के विरुद्ध कदम उठायँगे।"

"हमसे वोट माँगते समय उन्होंने कहा था कि हमें निर्वाह के योग्य मज़दूरी दिलायँगे। वह सब बेकार साबित हुआ। मंत्रिगण इन पूंजीपतियों के अपने ही आदमी हैं। हमको जो पाना है वह हमें संघर्ष करके लेना पड़ेगा। ऐसा करने के लिए हमें जेल जाने या मर मिटने, सबके लिए तैयार रहना होगा।"

कैसा अन्धकारमय भविष्य है! चिरुता के मन की शान्ति सदा के लिए नष्ट हो गई।

इक्कीस

कुट्टनाट के खेत-मजदूरों की पहली सीमित माँगें संघ के द्वारा पेश की गई। ये माँगें केवल किसानों के ही सामने नहीं, प्रत्युत सरकार के सामने भी रखी गईं, जिसमें उनके वे प्रतिनिधि भी थे जिन्होंने चुनाव के समय खेत-मजदूरों की दिक्कतें दूर कराने के ध्येय की घोषणा की थी। संघ की माँगें मज़दूरों के अधिकारों को ही प्रकट करने वाली नहीं थीं वरन् भविष्य में क्या होने वाला है इसकी चेतावनी भी देने वाली थीं।

ऐसा प्रतीत हो रहा था कि परया और पुलया संगठित होकर मज़बूत हो गए हैं। उनकी आवाज़ में बल आ गया है। वे कहने लगे कि मज़दूरी में दिया जाने वाला धान उनके सामने नापा जाना चाहिए और वह भी पूरा भरकर।[1]········उनके आचार-व्यवहार में अन्तर दिखाई देने लगा।

---

१. अर्थात् नाप के बरतन को पूरा भर देने के बाद उसके ऊपर जो ढेर बन जाता है उसके साथ।

जो परया और पुलया मज़दूरी अधिक माँगते हैं वह एक हिसाब के अनुसार ही माँगते हैं। उसके पीछे एक सिद्धान्त है। ऐसा सिद्धान्त, जिसका उत्तर किसान के पास नहीं है। वे तर्क करना जानते हैं। बोलने की उनमें भी शक्ति है।

कल तक मूक प्राणी की तरह आपकी डाँट-फटकार सब सहन करने वाले और आप जो देते थे उसे चुपचाप लेकर चले जाने वाले वे परया-पुलया इतने कैसे बदल गए ? किसने उन्हें सिखाया। यह आश्चर्य की बात है।

यह सब उनमें सहज ही हुआ। हाथी को अपना बल मालूम हो गया। उसने अपना महत्त्व समझ लिया और अब वह बोलने लगा है। उसे बोलने के लिए एक विषय और ढंग भी मिल गया। युगों का अनुभव उनके पास है। उसके लिए एक तत्त्व-शास्त्र अपने-आप नहीं बन जायगा।

पैदावार का एक हिस्सा उन्हें मिलना चाहिए। वह हिस्सा क्या हो सकता है, इसका भी हिसाब था। तम्पुरानों का लाभ जो है वह वास्तव में मज़दूरों की मज़दूरी है और जन्मी (जमींदार) को लगान की रकम। उसके बारे में भी उनका अपना सिद्धान्त है।

उनकी माँगें धृष्टतापूर्ण, अव्यावहारिक और न्याय-रहित हैं, जमीं-दारों की ओर से ऐसा आरोप लगाया गया; लेकिन वे भयभीत हो गए। परयों और पुलयों के कथन में कुछ सचाई तो नहीं है ? ऐसे सन्देह में वे पड़ गए।

मज़दूरों की बढ़ती हुई समस्या का झंझट समाप्त कर देना उन लोगों को आवश्यक मालूम होने लगा। किसानों ने यह भी सोचा कि खेती के काम से परयों-पुलयों को बिलकुल निकाल ही क्यों न दिया जाय। गरीब नायर, ईसाई और ईषवा आदि लोगों को काम में लगाकर उन्हें सिखाया जाय तो कैसा होगा ? एक-दो ने ऐसा करके देखा भी। लेकिन नहीं, वहाँ

भी संघ ने हस्तक्षेप किया। उसका विरोध किया, और अब धमकी दे दी है कि ऐसा करेंगे तो····।

जब परयों और पुलयों ने मज़दूरी बढ़ाने की माँग पेश की तब गरीब नायर और ईसाई-मज़दूरों ने भी समझा कि वे भी मज़दूरी बढ़ाने की मांग क्यों न करें। वे भी अपनी माँग रखने लगे।

परम्परा से चली आने वाली सामाजिक व्यवस्था के जड़ से उखड़ जाने की शंका होने लगी। अब तक 'पवित्र' माने गए कई विषयों पर प्रश्न उठने लगे। मजदूरों का उचित हक न देना और निजी सम्पत्ति का अधिकार (Private Property Right) पाप है, ऐसा समझा जाने लगा।

परया, पुलया, नायर सब एक होने लगे। ईश्वर का विश्वास भी टूटने लगा। धीरे-धीरे मज़दूरों के संघ और जलूस सारे प्रदेश में काम करने लगे। सब जगह पूँजीपतियों के हृदयों को कँपाने वाले नारे गूँजने लगे। ज्वालामुखी का विस्फोट अवश्यम्भावी मालूम होने लगा।

कई जगहों पर काम रुक गया। कई जगहों पर माँगी हुई मज़दूरी न मिलने पर मज़दूर काम पर नहीं लौटे। वे नम्पूरानों के घरों पर ठहरकर नारे लगाने लगे।

इसे रोकना अनिवार्य प्रतीत हुआ। सरकार ने चेतावनी के रूप में सूचना दी कि मज़दूरों को संगठित होने और व्यवस्थित ढंग से अपनी कठिनाइयों को दूर करने का उपाय करने का अधिकार तो अवश्य है, लेकिन कुट्टनाट के मज़दूर यदि सीमा पार करके देश की शान्ति भंग करेंगे और खाद्यान्न की कमी की इस विषम परिस्थिति मे विध्वंसक प्रवृत्तियों में लगकर देश को संकट में डालेंगे तो सरकार आँखें मूँदकर नहीं बैठी रह सकती।

कोरन फरार हो गया। घर में चिरुता इन्तजार में अधीर होने लगी।

कई बार पुलिस उसकी खोज में वहाँ पहुँची। उस प्रदेश के नेताओं की यह राय थी कि उसे पकड़कर ठीक कर दिया जाय तो सारा झगड़ा समाप्त हो जायगा। उनकी राय में कोरन ही इन सब झगड़ों की जड़ था।

कभी-कभी रात के समय वह घर आता। आकर चले जाने पर फिर उसके लौटने तक चिरुता को शान्ति नहीं मिलती। यदि वह पकड़ लिया जाय तो क्या होगा? इसकी वह कल्पना भी नहीं कर सकती थी।

इतना ही नहीं। तम्पुरान घर खाली कर देने के लिए भी जोर देने लगे। यदि उसने घर खाली नहीं किया तो जबरदस्ती निकाल दी जायगी, ऐसी धमकी भी दी गई। यदि सचमुच वह निकाल दें तो वह कहाँ जायगी? लौटकर माँ के पास? तब तो किसी दूसरे से शादी करनी पड़ेगी। बाप दूसरी शादी कराये बिना मानेगा नहीं।...नहीं, नहीं, इस जन्म में यह नहीं हो सकता।

एक रात को कोरन नदी में तैरकर घर आया और चिरुता को आवाज दी। वह जाग रही थी।

"कौन?" चिरुता ने पूछा।

"मैं हूँ।"

कुछ समय तक चिरुता यह निश्चय नहीं कर सकी कि कोरन ही खटखटा रहा है।

"अरी, मैं ही हूं।"

जब चिरुता को निश्चय हो गया। उसने झट उठकर दर्वाज़ा खोल दिया। वह पूरे एक सप्ताह के बाद लौटा था। उसने देखा कि एक ही सप्ताह में चिरुता बहुत दुबली हो गई है। उसने पूछा—"अरी, तू कुछ खाती-पीती क्यों नहीं?"

"खाती तो हूँ।" चिरुता ने जवाब दिया।

"फिर ऐसी क्यों लग रही है? शरीर छूने से हड्डी-ही-हड्डी मालूम

होती है।"

चिरुता जरा मुस्कराई। तारों के उस मन्द प्रकाश में भी कोरन को उसकी मुस्कराहट का आभास मिल गया। उस मुस्कराहट में एक नये आनन्द का रहस्य छिपा था। लेकिन, कोरन उसे न समझ सका।

"तुम क्यों हँसती हो ?"

"वाह ! मैं हँस भी नहीं सकती ?"

"जब कहता हूँ कि तुम कमजोर हो गई हो, तब तुम हँसती हो ?"

सलज्ज भाव से चिरुता ने कहा, "मुझे आजकल खाना-पीना अच्छा नहीं लगता।"

"क्यों बीमार हो क्या ?"

चिरुता फिर हँस पड़ी।

"हाँ यह एक तरह की बीमारी ही है, जो दसवाँ महीना होने पर बाहर दिखाई देगी।

कोरन की खुशी का ठिकाना न रहा। वह प्रेम से बार-बार चिरुता को चूमने और उसके पेट पर अपना हाथ फेरने लगा।

"अभी पेट बढ़ा नहीं है," चिरुता ने कहा।

"फिर भी थोड़ा तो बड़ा हो गया मालूम होता है।"

"लेकिन, बच्चे को आखिर कहाँ जन्म दूँगी ?"

"क्यों ?"

दोनों के सामने एक गम्भीर समस्या थी। चिरुता ने कहा—"तम्पुरान ने कहा है, घर छोड़ दो, नहीं तो जबरदस्ती निकाल दूँगा।"

"यदि निकाल दें तो फिर भी यहीं आकर रहना।"

"तब मार ही डालेंगे।"

"मारने दो !"

कैसी दृढ़ता है यह ! कहता है कि निकाले जाने पर फिर आना, मारते

हैं तो मारने देना ! मानो निश्चित कार्यक्रम की स्पष्ट पद्धति बता रहा हो ! उसने आगे साफ-साफ बताया, "वे मार डालेंगे तो उसका नतीजा अच्छा ही होगा। परया और पुलया जाति का उससे फायदा ही होगा।"

"उससे तुमको दुःख नहीं होगा ?"

"अरी वह दूसरी बात है। जाने दो उसे । मुझे अब जल्दी जाना है। सम्भव है मुझे पकड़ने के लिए मेरे पीछे-पीछे आदमी यहाँ पहुँच जायँ।"

चिरुता की हाँडी कभी खाली नहीं रहती थी। उस दिन भी उसने कञ्जी और भाजी रखी थी। चिरुता ने कोरन के सामने परोसकर रख दिया। कोरन ने खाना खाया। तीन-चार दिन के खर्च के लिए चिरुता के हाथ में कुछ पैसे देकर वह निकल गया।

बाईस

कोरन के चले जाने के बाद चिरुता को याद आया कि उसे कोरन से कई बातें पूछनी थीं। फिर न जाने वह कब आयगा? आ सकेगा या नहीं? 'जबरदस्ती घर से निकालने पर फिर आकर रहना, मारें तो मार खाकर भी मत जाना!' इस पद्धति के विषय में वह बार-बार सोचने लगी।

चौथे दिन कोरन फिर रात में आया। वह ठण्ड से काँप रहा था। वह दो-ढाई घण्टे पानी में तैरकर आया था। दरवाजा बन्द करके चूल्हे में आग जलाकर वह तापने बैठा।

चिरुता ने पूछा—"इस तरह कितने दिन बिताओगे?"

"जितने भी हों।"

"पकड़े जाओगे तब?"

"जेल में पड़ा रहूँगा।"

कोरन ने अपनी प्रतिज्ञा फिर दुहराई। वह अपना जीवन मजदूरों की भलाई के लिए अर्पित कर चुका है। वह आगे खेत में काम करके उसका

पालन-पोषण करेगा, ऐसी आशा रखना व्यर्थ है। चिरुता ने भी अपना निश्चय दुहराया कि वह हर हालत में उसके साथ रहेगी।

कोरन ने कहा—"उस दिन मैंने तुमसे सच कहा था कि तुम मेरे रास्ते में एक रुकावट ही हो। एक लड़की से शादी करके उसे कष्ट में रखता हूँ, यह विचार मुझे व्याकुल कर देता है। ······ शान्त होकर घर में सुख से रहना मेरे भाग्य में नहीं।"

कोरन ने अपने दिल की बात प्रकट की। उसका गला नहीं रुँधा, न आँखों में आँसू थे। फिर भी चिरुता जानती थी कि वह भीतर-ही-भीतर एक गहरी पीड़ा का अनुभव कर रहा है।

उसने कहा—"मैंने कहा है न कि मैं किसी प्रकार बाधक नहीं बनूँगी। मुझे तुम्हारे काम से खुशी ही है। तुम कहीं भी जाओ और कुछ भी करो, मेरी शुभकामना सदा तुम्हारे साथ रहेगी। मैं भूखी रहने के लिए तैयार हूँ। बच्चा होगा तो मैं उसे भी पालूँगी। दुःख की क्या बात है?"

कोरन के कन्धे पर उसने अपना सिर रख दिया और उसकी चौड़ी छाती को अपने हाथ से परिवेष्टित कर लिया। कोरन ने चिरुता को एक गाढ़ आलिंगन में बाँध लिया।

"चिरुता!"

"ऊँ।"

"मैं एक बात कहूँ तो तुम्हें बुरा तो नहीं लगेगा?"

"नहीं।"

"सुनो, कुछ साल पहले वयलार[1] में जैसे मजदूरों को गोली से उड़ा

---

१. वयलार की घटना तिरुवितांकूर के इतिहास में एक रोमांचकारी घटना है, जब कि सरकार की तरफ से २००० निहत्थे लोगों की भीड़ पर गोली चलाई गई थी। यह घटना चेतला क्षेत्र के वयलार

दिया गया था, वैसे ही सम्भव है अब परये-पुलयें भी उड़ा दिए जायँ। बात ऐसी ही है। मुझे पकड़कर जेल में भी बन्द किया जा सकता है। इसलिए········"

कोरन आगे न कह सका। उसकी हिम्मत नहीं हुई; वह विचलित हो गया।

"इसलिए ?"

"यदि तुम्हें किसी के हाथ सौंप जाऊँ तो मैं निश्चिन्त होकर अपने काम में लग सकता हूँ।"

"क्या कहा ?"

कोरन ने शान्त भाव से आगे कहा—"ये सब बातें सोच-समझकर जो उचित हो करना चाहिए। औरतें किनके लिए हैं ? औरतें घर बसाकर रहने वालों के लिए हैं। मेरी बात········।"

चिरुता बैठी हुई कोरन की ओर ताकती रही। एक यन्त्र की तरह निर्विकार भाव से कोरन कहता गया—"वह चात्तन, हमारा चात्तन ? वह अच्छा आदमी है तुमसे शादी करने के लिए तपस्या करता रहा। अभी तक उसने कहीं शादी नहीं की है। कहता है, इस जन्म में वह शादी

गाँव में १९४६ के अक्तूबर महीने में स्थानीय सम्वत् ११२२, तुला मास, तिथि १० को घटी। लोगों के लगाए नारियल के पेड़ों से जब आमदनी होने लगी तब जमीन के मालिक-जमींदार उन्हें निकालने लगे। मजदूरों ने संगठित होकर विरोध किया। स्टेट कांग्रेस उस समय के दीवान की सरकार से लड़ रही थी। कांग्रेस के वाम-पक्षी सदस्यों ने मजदूरों की मदद की। पूँजीपति डर गए। सरकार ने सैनिक-शासन शुरू करके उनकी मदद की। उस संघर्ष में सरकारी रिपोर्ट के अनुसार ८०० आदमी मरे थे।

ही नहीं करेगा।"

"इसलिए ?"

यह प्रश्न सुनकर कोरन चौंका। चिरुता ने एक बार कोरन को नीचे से ऊपर तक कड़ी नज़र से देखा। कोरन ने अनुभव किया कि जैसे उसने बड़ा भारी अपराध किया है। चिरुता ने दृढ़ स्वर में कहा—"मेरा कुछ अपना भी निश्चय है।"

एक क्षण के लिए कोरन मूक होकर खड़ा रहा। चिरुता को बहुत-कुछ कहना था। लेकिन उसके मुंह से शब्द नहीं निकले।

"तुम सोचकर देखो, सोचकर देखो !"

मानो चिरुता के सामने खड़ा रहना और उससे आँखें मिलाना उसके लिए कठिन हो गया, वह वहाँ से निकलकर पानी में घुसा और लापता हो गया।

एक क्षण के बाद चिरुता को होश आया। उसे लगा कि उसका पति उससे हमेशा के लिए अलग हो गया। 'सोचकर देखो'···· उसके ये शब्द खेतों से आने वाली हवा में प्रतिध्वनित होने लगे।

ओह, वह साँवला स्वस्थ शरीर फिर देखने को नहीं मिलेगा ? क्या वह अकेली हो गई ? उसका मन एक बार जोर से रो पड़ने के लिए बेचैन हो उठा।······सामने की विस्तृत जलराशि में दूर पर कहीं पानी के ऊपर उसका सिर दिखाई देता है कि नहीं, यह वह ध्यान से देखने लगी। ····नहीं····

इस तरह भी जब वह जाता था तब एक चुम्बन का उसका अधिकार था। अन्धेरे में भी एक मुट्ठी भात वह पास बैठकर परोसकर खिला देती थी और वह खाकर ही लौटता था। कुछ बातें भी बतला जाता था। उस दिन क्या-क्या कहा ?

क्या यह सम्भव है कि वह फिर कभी न आए ? वह 'वयलार'

के मजदूरों की भाँति गोली का शिकार भी हो सकता है। उसने कहा ही था कि प्रतीक्षा में न रहना। क्या वह अन्तिम विदा ले रहा था।

चिरुता को अपने विवाह का दिन याद आया। अपने भाई-बन्धुओं के विरुद्ध हो जाने पर भी उसने विवाह किया था। बिना विवाह कराये घर में ही रोक रखने के विचार से पिता ने जो शर्त रखी थी उसे भी पूरा किया। कैसा आवेश था उसका। वह अपनी एक-एक साँस और दिल की एक-एक धड़कन से उसको प्यार करता था। उसकी एक ही चाह थी कि वह भरपेट खाना खाय, साफ स्वच्छ कपड़ा पहने, और हँसी-खुशी से रहे। इसीके लिए वह जीता था। बीते हुए दिनों की एक-एक बात उसे याद आने लगी। एक-एक बात कोरन के प्रेम से सराबोर थी।

'सोचकर देखो' कहकर वह उस विशाल जल-राशि में गायब हो गया। यह कैसा परिवर्तन है? प्रेम क्या इतना निर्बल है?

पुष्पवेली चावकी का घूरना। मरिया के शब्द कि वह अपने को कैसे बचायगी।

किसी तरह दस महीने कट जायँ। उसे एक बच्चा हो जाय। बच्चा होने के बाद फिर कोई डर की बात नहीं है। ऐसा ही न कहा था। कैसे ये दस महीने के दिन काटेगी? कैसे भी हो, उसे अपने चरित्र-धन की रक्षा करनी ही चाहिए।

उसके पति में इतना परिवर्तन! यह उसको विश्वास नहीं हो रहा था कि उसके प्रेम का निर्झर सूख सकता है? नहीं, यह असम्भव है। वह भी अब, जब कि वह माँ बनने जा रही है! वह बच्चा जब जन्म लेकर बढ़ेगा और अपने बाप के बारे में पूछेगा तब वह उसे क्या उत्तर देगी? क्या उस विशाल जल-राशि को दिखाकर वह कह सकेगी कि वह उसमें डूबकर लापता हो गया?

चिरुता काँप उठी। हाँ, उसका पति उसे छोड़कर ही चला गया।

वह कह रहा था कि उसे विवाह नहीं करना चाहिए था। उसे दूसरे का आश्रय लेने को कहा गया है।

रोते-रोते अन्त में चिरुता की आँखें लग गई। कोई पुकार रहा है, ऐसा उसे लगा। क्या देखती है कि उसके सामने चात्तन की मूर्ति खड़ी है। वह युवक चिरुता के पिता का पैर पकड़कर प्रार्थना कर रहा है कि वे उसे निराश न करें।········उसके विवाह के दिन कोरन के बन्धु-मित्र सब रूठकर चले गए। तब कोरन को धीरज देने के लिए अकेला वही रह गया था। उसके बाद भी जब-जब कोई मुसीबत आई तब-तब चात्तन ही सहायता के लिए तैयार रहा था। चिरुता को लगा कि चात्तन सामने खड़ा है। निष्फल जीवन का सजीव चित्र।

इस याद को भुला देने की बहुत कोशिश की। लेकिन वह जितनी भी कोशिश करती उतनी ही वह तीव्र और स्पष्ट होती गई।

कितना सच्चरित्र! कैसा अच्छा स्वभाव!! चात्तन से एक भी गलती नहीं हुई है।

तेईस

पुष्पवेली चावक्को को कोरन ने अपनी झोंपड़ी में मार डाला। एक दिन आधी रात को जब कोरन घर आया तब चावक्को किसी साथी की सहायता से चिरुता के साथ बलात्कार करने की कोशिश करता पाया गया। चिरुता के मुंह में कपड़ा ठूँसा हुआ था और वह बेहोश पड़ी थी।

कोरन वहाँ से बच निकला। कुछ ही दिनों के भीतर पकड़ लिया गया।

चिरुता पत्रोस के घर में भेज दी गई। कई दिन तक वह बेहोश पड़ी रही। जब वह होश में आई तो उसने चात्तन को अपने पास देखा और एक सम्भावित भय के कारण झट अपनी आँखें मूँद लीं।

लेकिन वह आँखें बन्द करके कब तक रह सकती थी? चात्तन की मौजूदगी उसे स्वीकार करनी पड़ी। उसके हाथ से दवा पीने के लिए उसने मुंह खोला। उससे बातें भी कीं। इस तरह चात्तन की यथार्थता से वह अवगत हो गई।

चिरुता का बुखार उतरा। वह अच्छी हो गई। जिस दिन वह रोग-

शय्या छोड़कर उठी उस दिन चात्तन के आनन्द का ठिकाना न रहा। उसकी सेवा-शुश्रूषा से चिरुता ठीक हो गई। चात्तन की खुशी में चिरुता को जीवन की एक नई सचाई का अनुभव हुआ।

चिरुता ने पूछा—"आज इतने खुश क्यों मालूम हो रहे हो चात्तन?"

चात्तन ने जवाब दिया, "तुम्हारी बीमारी खतरनाक हो गई थी।"

चिरुता ने समझ लिया कि चात्तन कब से उसकी सेवा में है।

मरिया ने कहा—"अगर कोरन रहता तो वह भी इतनी सतर्कता से तुम्हारी सेवा न करता। चात्तन ने कितने मन से सेवा की है। कितना सम्पत्तिशाली आदमी है यह!!"

चात्तन ने चिरुता से कहा—"कोरन ने ही मुझे यहाँ भेजा है। मुझसे उसने सब बातें कहीं हैं।"

चिरुता बड़े गुस्से में आ गई। वह खिसियाकर बोली, "लेकिन यदि मैं तैयार न होऊँ तो?"

चात्तन का चेहरा उतर गया। वह माफी माँगने के स्वर में बोला, "झगड़ो मत चिरुता, तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध तुम्हें पत्नी बनाने की बात मैंने नहीं कही है। उसने तुम्हारी रक्षा का भार ही मुझे सौंपा है। जब तुम्हें बच्चा हो जाय तब उसे पालने-पोसने को कहा है। मेरी इस जन्म में कोई पत्नी नहीं है।"

चात्तन की आँखों में आँसू आ गए थे। चिरुता का दिल भी सहानुभूति से भर गया।

एक दिन चिरुता ने सजल आँखों से चात्तन से कहा—"तुम्हारे उपकारों का बदला चुकाने के लिए मेरे पास कुछ नहीं है।"

चिरुता से यह बात छिपी न रही कि चात्तन उसीके लिए जीता है और उसकी हर इच्छा को समझकर उसके अनुसार ही व्यवहार करता है।

"मुझे कुछ नहीं चाहिए," चात्तन का यही उत्तर था।

लेकिन चिरुता डरने लगी कि उसके उपकारों के बदले में यदि अभी कुछ न कहे तो उसके भार से एक दिन शायद वह खुद फिसल जायगी। वह बोली, "मेरे भाई नहीं था। अब एक भाई हो गया।"

चात्तन ने कुछ नहीं कहा। चिरुता ने पूछा—"बोलते क्यों नहीं हो?"

"मैं क्या कहूँ?"

"तब, मेरे भाई होकर मेरे बच्चे के मामा बनोगे और इस तरह मरते दम तक गुजारा करेंगे? क्यों?"

चात्तन ने अपनी सहमति प्रकट की।

कुछ दिन और बीते। चात्तन की सेवा-सहायता सब वह देखती और अनुभव करती रही। उसके दिल में एक डर समा गया। कहीं वह चात्तन की सेवाओं से प्रेरित होकर अपने को उसे सौंप तो नहीं देगी? अगर चात्तन जरा भी चंचलता दिखाता, मुंह से कोई अनुचित शब्द निकालता तो वह काफी होता···चिरुता तुरन्त उसे घर से निकाल देती।

एक दिन चिरुता ने कहा—"सब भाग्य का फल है। बाबू ने जितना माँगा उतना दे दिया होता तो···चात्तन ने चिरुता की ओर गौर से देखा। अनजाने ही उसका चेहरा एक आशा से खिल उठा।

चाक्को की हत्या से कुट्टनाट के किसान-मालिक लोग भय से घबरा गए। इसे परयों-पुलयों के बढ़ते हुए अत्याचारों का एक उदाहरण बताया गया। परयों-पुलयों को मालिक लोग जहाँ पाते, पीटने लगते। संघ एक-एक घटना को दर्ज करता गया।

संघ ने एक स्वयं-सेवक-मण्डल कायम किया। झूठे आरोपों का मुकाबला करने के लिए प्रति-रक्षा-विभाग बनाया। इसी के द्वारा कोरन के मुकदमे की पैरवी भी होने लगी। उसी आधी रात की घटना को

प्रमाणित करना आवश्यक था ।

जब चात्तन ने एक घर अलग बनाकर उसमें रहने ही बात उठाई तब चिरुता ने विरोध किया । क्यों, अलग क्यों रहोगे ? अलग घर बनाकर किसकी प्रतीक्षा में तुम्हें रहना है ?····लेकिन प्रसव के लिए एक अलग जगह तो चाहिए । उस बच्चे का पालन-पोषण भी करना है । फिर कोरन भी लौटेगा ही ।

परयी और पुलयी लड़कियों की रक्षा के लिए कुछ करना है । आधी रात के समय घर तोड़कर भीतर घुसकर और चैत में खलिहान के पुआल के ढेरों के पीछे किये जाने वाले पाशविक कुकर्मों के सत्यानाश से उनको बचाना है । मरिया की कहानियों में तो उसका नाम भी आ ही गया । इस तरह सताई गई औरतें किस हालत में होंगी; यह प्रश्न कई बार पहले भी चिरुता के मन में उठा था । अब दर्पण में उसने अपना ही प्रतिबिम्ब देख लिया । उन बेचारियों के लिए यदि वह कुछ नहीं करेगी तो और कौन करेगा ? घर-घर में जाकर जो काम पति नहीं कर पाया उसे यदि वह कर सके तो पति के लिए इससे अधिक प्रसन्नता की बात और क्या हो सकती है ?

चिरुता ने चात्तन को अपना विचार बतलाया । चात्तन में विरोध करने की शक्ति नहीं थी । लेकिन उसने कहा कि कोरन की यह इच्छा नहीं थी ।

चात्तन की कोशिश से घूस-रिश्वत देकर चिरुता एक बार कोरन को देख सकी ।

कठघरे की लोहे की छड़ों के दूसरी ओर कोरन और इस ओर चिरुता ।····इस प्रकार दोनों की भेंट हुई । वह दृश्य चिरुता के लिए

असह्य था। कोरन पीला पड़ गया था। उसने अपने बढ़े हुए पेट की ओर कोरन को ताकते देखकर कहा—"अभागा बच्चा!"

चिरुता की आँखों से आँसू बह रहे थे। वह बोली—"बाबू के बारे में पूछेगा तो क्या कहूँगी?"

"कह देना, जेल में है।"

"क्या, अब किसी दिन भी नही आ सकोगे?"

"पन्द्रह साल की सजा है।"

"पन्द्रह साल!"

कोरन ने कहा—"मेरी प्यारी चिरुता, तू मेरे लिए प्रतीक्षा में मत रहना! बच्चे को पालना! चात्तन बहुत अच्छा आदमी है। वह तेरी रक्षा करेगा। उससे मैंने सब-कुछ कह दिया है।"

"मुझे किसी की रक्षा या सहायता की आवश्यकता नहीं है। मैं निस्सहाय औरतों की सहायता के लिए संघ में दाखिल होने जाती हूँ।"

कोरन के होठों पर मुस्कराहट दौड़ गई। उसने कहा—"तू इस काम में पड़ेगी तो बच्चे को कौन देखेगा? तुझे भी जेल ज़ाना पड़ेगा तो बच्चे का क्या होगा?"

दूर एक पेड़ के नीचे बैठा चात्तन मिट्टी में कुछ रेखाएँ खींच रहा था। जब सिर उठाकर उसने देखा तब कोरन ने उसे पास बुलाया।

कोरन को लगा कि उसे एक काम करना शेष है। लोहे की छड़ों के बीच से उसने चिरुता का हाथ पकड़कर चात्तन के हाथ में सौंप दिया। जैसे पिता बेटी का हाथ पति के हाथ में पकड़ा देता है वैसा ही कोरन ने किया। कभी कहीं भी नहीं हुआ था ऐसा विवाह-कर्म!!

लौटकर जाते समय चिरुता ने चात्तन से कहा—"मैं अब भी दूसरे की पत्नी नहीं बन सकती।"

चात्तन ने कोई जवाब नहीं दिया।

"मुझे अपनी बहन समझना काफी है।"

वह एक दयनीय प्रार्थना थी। चात्तन ने उसका भी उत्तर नहीं दिया।

चिरुता ने आगे कहा—"किसी परया को अपनी स्त्री किसी दूसरे को इस तरह देने का क्या अधिकार है?"

चात्तन ने इस प्रश्न का भी उत्तर नहीं दिया।

चौबीस

चिरुता चात्तन की बनाई हुई झोंपड़ी में रहने लगी। उसके प्रसव का समय निकट आ रहा था। वह काम पर नहीं जाती थी। चात्तन ही काम पर जाता था। मजदूरी में जो कुछ मिलता, लाकर वह चिरुता को दे देता।

वह घर ऐसा था मानो भाई-बहन के रहने का हो। सवेरे एक स्नेह-मयी बहन की तरह चिरुता चात्तन के सामने बासी कञ्जी और भाजी परोसकर रख देती। शाम को चात्तन कितना भी खाये, चिरुता को तृप्ति नहीं होती थी। पास में बैठकर वह उसे खिलाती, खाना समाप्त हो जाने पर बाहर ओसारे में चात्तन के लिए चटाई रख देती; और पान भी रख देती। बाहर जाकर जब वह पान खाना शुरू करता तब उस झोंपड़ी का दरवाजा भी भीतर से बन्द हो जाता था।

चात्तन बाहर बिना नींद के पड़ा रहता। भीतर चिरुता भी नहीं सोती। दोनों के सोचने के लिए अनेक बातें थीं। चात्तन के जीवन के साथ

बढ़ता हुआ एक आवेश चिरुता देखती और समझती थी। वह एक स्त्री थी! एक-एक क्षण, एक-एक घण्टा, हर दिन, हर हफ्ता बराबर वही आवेश वह देखती और भीतर-ही-भीतर व्याकुल हो उठती।

बाहर ठण्ड से काँपता हुआ, खाँसने वाला वह बेचारा कितना भाग्य-हीन है!

वह अपनी इच्छा तक प्रकट नहीं करता। फिर भी उसे दबाने की असमर्थता और परेशानी चिरुता समझती।······क्यों न बुलाकर जरा भीतर ही सोने को कहे! बेचारा भीतर ठण्ड से बचकर आराम से सो तो सकता है। मेहनत करके कमाकर सब-कुछ लाकर देने पर भी बेचारे को रात की ठण्ड में बाहर ही सोना पड़ता है।···बेचारा उस दिन की प्रतीक्षा में समय काटता है जब कि भीतर आकर लेट सकेगा।···नहीं, नहीं,···वह एक परया की पत्नी हो चुकी है। अब दूसरे की नहीं हो सकती!

चात्तन भी सोचता है। चिरुता एक की हो चुकी है। उससे उसे पूरी तृप्ति है। यदि वह ऐसे ही अपनी जिन्दगी पति के ही ध्यान में बिताना चाहती है तो यह उचित ही है। लेकिन कोरन ने उसके हाथ में जो सौंप दिया। फिर भी चिरुता ने जैसा कहा, पति को क्या हक है कि वह अपनी पत्नी को किसी दूसरे को सौंप दे। पत्नी भी अपना मान और अधिकार रखती है न? शायद वह उसे (चात्तन को) प्यार नहीं करती होगी? फिर भी वह अपना जीवन इसके लिए न्योछावर कर चुका है।

चात्तन जान-बूझकर जोर से खाँसा। भीतर से चिरुता के कराहने की भी आवाज़ आई। वह सोई नहीं है, इसकी सूचना दे रही थी।

चात्तन ने पुकारा, "चिरुता?"

"ऊँ?"

"तुम सोई नहीं हो अभी तक?"

"ना, अच्चायन[1] नहीं सोए ?"

"ना !"

इस तरह गरम आहें लेते बहुत दिन बीत गए। चिरुता चुपचाप बैठकर टोकरी बुनती, तब चात्तन भाव-भरी आँखों से उसे देखता। वह क्या-क्या सोचती होगी ! कब तक यह 'भाई-बहन' का भार ढोते रहना पड़ेगा ?

चिरुता भी खेतों की हवा में हिलने वाले धान की ओर नज़र लगाये बैठे चात्तन को देखती रहती है। वह क्या-क्या सोचता होगा ? यह प्रतीक्षा कब तक चलेगी ? कई बार यह प्रश्न और विचार चिरुता के मन में भी उठा। उसकी इच्छा अपूर्ण ही रह जायगी न ?····पास बुलाकर दुखी न होने को कहूँ तो।····

कुट्टनाट में जलूस निकालने और सभाएँ करने की मनाही हो गई। लेकिन संघ ने इस आज्ञा का उल्लंघन करने का निश्चय किया। इस प्रकार मजदूर-संघ की लड़ाई एक बात को लेकर बढ़ने लगी।

देश-भर के मजदूर जाग उठे। सबने उस बात को अपनी जिम्मेवारी समझा। दलित वर्ग अपनी शक्ति संगठित करने लगा। रियासत के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण घटना घटने की सम्भावना उपस्थित हो गई।

यह अफवाह फैल गई कि धान से भरे खेत बाँध तोड़कर पानी में डुबोकर नष्ट किये जा रहे हैं और धनी किसानों के घर लूटे जा रहे हैं। रोज-रोज तरह-तरह की अफवाहें फैलने लगीं। संघ ने इन अफवाहों का खण्डन किया।

---

१. अच्चायन=भाई (आदर सूचक प्रयोग)।

फिर भी मालिक लोगों का डर नहीं मिटा। जब तक संघ कायम रहेगा तब तक मालिक-वर्ग के लोगों का डर भी दूर होने वाला नहीं था। यह डर पुलयों के मजदूरी माँगने या उन्हें बोलने की शक्ति प्राप्त हो जाने से शुरू नहीं हुआ। लेकिन जब वे संगठित होकर अपनी माँगें पेश करने लगे और जब उन तकलीफों का बयान करने लगे, जिनको उन्हें सहना पड़ता था, तब ऐसा लगा कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी उन पर किये गए अन्याय और अत्याचार प्रेत का रूप धारण करके प्रत्यक्ष हो गए हैं। चात्तन, कोरन, इट्याती आदि काले-काले रूप लोगों को अब आदमी नहीं मालूम नहीं होते। अब वे मालिक-वर्ग के द्वारा दिये गए दुष्कर्मों के प्रेत-जैसे मालूम होने लगे।

वह डर बाहर से नहीं आया। हरेक धनी किसान के मन में वह अपने-आप उठा। औसेप्प और कृष्ण पिल्ला भी आदमी ही तो हैं। वे आदमी, जिनमें स्नेह और सहानुभूति का गुण है? मनुष्य-जैसा सृष्टि का उत्कृष्ट प्राणी ऐसे पाप का भार कब तक ढो सकता है? उसे फेंक देने की ही अधिक सम्भावना है।

किसान-वर्ग के लोग डर के मारे दौड़-धूप करने लगे। गिरजों में लम्बी-लम्बी प्रार्थनाएँ चलाई गईं। मन्दिरों में खास पूजा और होम आदि भी किये गए। जिससे साम्यवाद से देश की रक्षा हो।

'देश के धानागार खतरे में', 'संस्कृति-नाशोन्मुख' इस तरह के नये-नये नारे भी सुनने में आने लगे। धनिकों ने सरकार से प्रश्न किये कि संकट-काल में वह क्या करने जा रही है। मन्त्रिगण, जिन्हें उनकी मदद मिली थी, कुछ जवाब नहीं दे सके।

संघ ने एक विशाल प्रदर्शन का कार्यक्रम बनाया। जैसे-जैसे प्रदर्शन की तिथि निकट आने लगी वैसे-ही-वैसे कुट्टनाट के नदी-नालों में सशस्त्र पुलिस गश्त लगाने लगी। लेकिन कोई भी परया या पुलया नहीं डरा।

वह स्मरणीय दिन भी आ गया। उस दिन गोली चलेगी। साँस लेना भी कठिन हो रहा था। मानो हवा भी भारी हो गई हो। सूरज की किरणों के रंग में भी एक फर्क ! उस दिन न मालूम क्या होगा !

चिरुता के घर से, मिलिटरी की नौकाएं तेजी से आती-जाती दिखाई देती थीं। पूर्ण गर्भिणी चिरुता—उसका भी खून खौलने लगा। काश वह भी उस दिन के कार्य-क्रम में भाग ले सकती।

अगर कोरन बाहर रहता तो झण्डा लेकर वही आगे-आगे रहता। सब आवाजों के ऊपर उसीकी आवाज गूँजती, उसके पीछे असंख्य काले-काले रूप दिखाई देते !

कठघरे के भीतर लोहे के सीखचों के पीछे पड़ा कोरन क्या यह सब जानता होगा ? उसका संघ कहाँ तक बढ़ गया है ! उसके बाहर आने तक यह किस हालत में रहेगा ? जिस संघ के ध्येय को पूरा करने के लिए वह उसे (चिरुता को) भी त्यागने को तैयार हो गया था, उस संघ को अर्पित करने के लिए एक अमूल्य सम्पत्ति भी उसे सौंप गया है। वह तो अभी उसके पेट में ही तड़प रही है।

चात्तन तब भी चिन्ता में डूबा बैठा था, मानो वह उस दिन की चहल-पहल के विषय में कुछ जानता ही न हो, मिलिटरी-स्टीमरों को देखता ही न हो; और मानो दूर से सुनाई पड़ने वाला मजदूरों का जय-घोष भी उसे सुनाई न देता हो। वह भी एक दलित पुलया है। उसके दादा-परदादा सबने अन्याय सहन किया है। कैसा ठण्डा खून है उसका। श्रमजीवी मजदूर-वर्ग जब अपने जीवन-मरण के संग्राम में लगा है तब वह वहाँ बैठा क्या सोच रहा है ? एक औरत के बारे में ?

सिर झुकाकर बैठे चात्तन के प्रति चिरुता के मन में इस प्रकार के हल्के विचार उठ रहे थे। घास-फूँस को भी जगाने और शक्ति प्रदान करने वाले नारे गूँज रहे हैं, और पूर्ण गर्भिणी चिरुता का खून भी जब खौल

रहा है, तब कोई पुरुष कैसे इस तरह झुककर निस्तेज, निश्चेष्ट बैठा हुआ है। चाहता है कि वह भीगी बिल्ली की तरह बैठने वाले ऐसे एक आदमी की पत्नी हो जाय। पति ने ऐसे ही एक आदमी के हाथ में उसे सौंप दिया है।

उसे लगा कि वह चात्तन को धिक्कार कर बाहर कर दे। ऐसे आदमी के साथ कैसे निबाह होगा ? क्या वह अपना हक समझ सकता है ? एक पत्नी किस विश्वास पर उसकी रक्षा में रह सकती है। उसे कोई पकड़ ले जाय तो वह अपनी कानी उँगली तक नहीं उठायगा। काम करके मजदूरी लेना भी उसे नहीं आयगा। वह डरेगा। भूखों रहेगा ! यह कैसी सृष्टि है ? यही मेरे बच्चे को पालेगा ?···

चिरुता ने पूछा—"आज प्रदर्शन के मैदान में नहीं जाते ?"

"नहीं।" बस इतना ही चात्तन का जवाब था।

चिरुता ने आगे कहा—"लेकिन सब मर्द गये हैं।"

"हाँ, गये हैं। मुझे काम है। मरने का डर नहीं है। मुझे तो मरना ही अधिक पसन्द है। लेकिन मेरे ऊपर एक बच्चे को पालने की जिम्मे-वारी है। उसकी माँ की भी देख-भाल करनी है।"

इन शब्दों से चिरुता का दिल बिंध गया। उसे कुछ कहने को नहीं रह गया। वह इतना ही बोली, "वह बच्चा संघ के लिए एक अमूल्य सम्पत्ति होगा। उसे बचाना है। मैं मर जाऊँगी तो वह भी मर जायगा।"

उस बातचीत में चिरुता को झुकना पड़ा।

उस दिन चिरुता की प्रसव-वेदना शुरू हो गई। पास के किसी भी घर में कोई नहीं था। उसके कराहने की आवाज़ दयनीय रुलाई में परि-

णत हो गई। समय के साथ रुलाई भी बढ़ती गई।

चात्तन व्याकुल चित्त होकर बाहर इधर-से-उधर घूम रहा था। बीच-बीच में वह चिरुता को पुकारता। उसे जवाब देना भी कठिन मालूम हो रहा था। फिर भी चात्तन की शान्ति के लिए वह 'ऊँ' कर देती।

सृष्टि की वेदना। इतनी भयंकर। यह चिरुता ने नहीं सोचा था। वह धीरज से सब-कुछ सहन कर रही थी।

चात्तन ने कई बार भीतर जाना चाहा। लेकिन हिम्मत नहीं हुई। वह कब तक खड़ा-खड़ा यह रुलाई सुनता रह सकता है?

रुलाई क्षीण होती गई और धीरे-धीरे फिर बन्द हो गई। बिलकुल निस्तब्धता, न तकलीफ में साँस लेने की आवाज़ है। चात्तन ने पुकारा। जवाब नहीं। चात्तन घबराकर भीतर घुस गया।

उधर प्रदर्शन के मैदान में बड़े ज़ोरों का शोर-गुल हुआ और लगातार गोली चलने की आवाज़ सुनाई पड़ी। वहाँ भी सृष्टि की··· विनाश की नहीं···प्रसव-वेदना है।

बारूद के विस्फोट की आवाज़ जितनी ऊँची उठती है मानो उतनी ही ऊँची आवाज़ में रोते हुए एक बच्चे का इधर जन्म होता है।

बच्चे का सिर जमीन पर न लगे इस खयाल से चात्तन ने अपना हाथ नीचे रख दिया। छटपटाता हुआ बच्चा निकल आया और निकलते ही वह काँपने और चिल्लाने लगा।

बच्चे की चिल्लाहट के कुछ मानी हैं। वह दुनिया को जता देता है कि वह अनन्त शक्तियों का एक समूह है।

पच्चीस

प्रदर्शन के मैदान के गोली-कांड मे खून की नदी वह गई। सारे प्रदेश में एक सनसनी फैल गई। इस सामूहिक हत्या-काण्ड से समाज का अन्तःकरण स्तम्भित हो गया। दूसरे ही क्षण सब ओर से यह आवाज आई, "यह नहीं होना चाहिए था।"

मन्त्रि-मण्डल ने भी अनुभव किया कि इसकी जिम्मेदारी उसीके ऊपर है। बहुत प्रयत्न करने पर भी मंत्रीगण इस विचार को नहीं दबा सके। देश इसका उत्तर माँग सकता है। तब उत्तर तो देना ही होगा।

इस पैशाचिक हत्या-काण्ड के विषय में जब पूछा गया तो पहला प्रश्न यह था, "कितने मरे ?"

"काफी संख्या में। चारों ओर गोली चलाई गई। वहाँ कई सौ लोग इकट्ठे थे।" यही सरकार का उत्तर था।

"गोली क्यों चलाई गई ?" यह दूसरा प्रश्न था, "क्या गोली चलाये बिना काम नहीं चल सकता था ?"

"लोग मरने के लिए क्यों तैयार हो गए ?"

ऐसे कितने ही प्रश्न विधान-सभा में चारों ओर से पूछे गए। जिनसे सरकार को सहायता की आशा थी उनमें से भी कई लोग अप्रत्याशित प्रश्न पूछ बैठे।

जो मारे गए आखिर सब आदमी ही तो थे ? और आदमी ने ही खून की नदी भी देखी। लेकिन निजी हित (प्राइवेट इण्टरेस्ट) की कितनी भी जोरदार कोशिशें क्यों न हों, जनता की सामूहिक भावना को वे कुचल नहीं सकतीं।

आज मनुष्य ने जो मनुष्यत्व प्राप्त किया है वह सामूहिक जीवन का ही परिणाम है। वह अपने को स्वरचित नियमों में बाँध देता है, वह भी किसी दूसरे कारण से नहीं। मनुष्य व्यक्तिगत लाभ के लिए एक-एक करके करोड़ों की भी हत्या करने में नहीं हिचकता। लेकिन वही एक ही प्रहार में एक साथ हजार की भी हत्या का दृश्य बर्दाश्त नहीं कर सकता। वास्तव में मनुष्य अच्छे गुण वाला एक प्राणी है। मानव-स्वभाव की अच्छाई में विश्वास किया जा सकता है।

मन्त्रि-मण्डल ने प्रश्नों की इस बौछार का किसी तरह कुछ उत्तर दिया। मजदूरों के हितों की रक्षा के लिए वह सदा से उत्सुक रहा है, लेकिन विध्वंसक तरीकों से कुट्टनाट के जन-साधारण के शान्तिमय जीवन को जड़ से उखाड़ फेंकने का संघ का काम देखकर वह चुप नहीं बैठ सकता था।

पराजित व्यक्ति ठीक उत्तर न दे सकने पर साधारणतः जो मनमाना उत्तर देता है, वैसा ही उनका उत्तर था।

लेकिन उस उत्तर से किसी को सन्तोष नहीं हुआ। बातें छिपाने की कोशिश और उत्तर देने में असमर्थता साफ प्रकट थी। मन्त्रि-मण्डल की असमर्थता ! ····ना, सामान्य जनता मन्त्रि-मण्डल को इस तरह छोड़ देने को तैयार नहीं थी। ऐसी स्थिति पैदा हो गई कि यह आशंका होने लगी

कि कहीं लोग यह न कह उठें कि सरकार ने जो काण्ड रचा वह एक अपराध के बराबर है ।

किसानों और ज़मींदारों ने अपने-अपने अखबारों में उस घटना को रंगीन मोटे अक्षरों में छापा । मरे हुए मजदूरों के प्रति समवेदना प्रकट की, उनके लिए गिरजों में प्रार्थनाएँ की गईं । लेकिन उन्होंने यह भी कहा कि इस हत्या-काण्ड के लिए संघ के नेतागण ही उत्तरदायी हैं । इस तर्क के द्वारा सरकार अपने बचाव का रास्ता ढूँढने लगी । संघ के जो नेता बच गए थे उनकी गिरफ़्तारी के लिए वारण्ट निकाला गया । कुछ लोग पकड़ लिए गए ।

इसका प्रभाव मज़दूर-वर्ग को और भी जगाने वाला सिद्ध हुआ । उनकी ओर से अपराधियों को उचित दण्ड देने की माँग उठी । कुट्टनाट के रक्त-पात के गवाहों का खून प्रतिकार के लिए खौल उठा ।

मन्त्रि-मण्डल और किसान-जमींदार-वर्ग को स्टेट कांग्रेस के सदस्यों से सहायता माँगने की आवश्यकता अनुभव हुई । सारे प्रदेश में एक जबरदस्त प्रचार का काम शुरू कर दिया गया ।

कुट्टनाट के छोटे किसानों ने भी उस दिन गोली चलने की गगन-भेदी आवाज सुनी थी, प्रदर्शन के मैदान में अपनी आँखों के सामने मरण-वेदना की चिल्लाहट, नहीं, वर्ग-चेतना का गर्जन सुना था । दूसरे दिन कइयों ने खून की नदी भी बहती देखी थी । उस दृश्य को वे सहन नहीं कर सकते थे ।

देश की वर्तमान स्थिति पर विचार करने के लिए कुट्टनाट प्रादेशिक सम्मेलन की एक बैठक बुलाई गई । उसमें सब छोटे किसानों ने भाग लेने का निश्चय किया । वे बिना भाग लिये रह भी नहीं सकते थे ।

कुट्टनाट के एक प्रमुख जमींदार उसके अध्यक्ष बने थे । तिरंगे झंडों से सजाई हुई मछुओं की छोटी-छोटी नावों ने अध्यक्ष का स्वागत करके

एक बड़े जलूस के साथ उन्हें सभा की जगह पर पहुँचाया। प्रदर्शन के मैदान की बगल से बहने वाली नदी में अहिंसा और प्रेम की महिमा का बखान करने वाले लोग नौका-गान गाते हुए जब नाव पर आगे बढ़े तब मानो सब झण्डे झुककर स्तम्भित हो गए। नौकाओं में खड़े किसान-मालिकों को लगा कि नौका-विहार में जोश नहीं है। नौकाएँ तेजी से नहीं चल रही थीं, एक तरह की मुर्दनी छाई हुई-सी लगती थी। उन्होंने ज़ोर से पाँव मारकर ताल की गति बढ़ानी चाही; लेकिन खिवैये उस गति का अनुसरण नहीं कर सके। ताल बेताल हो गया। खिवैयों के डाँड़ आपस में टकरा गए।

बहुतों को स्वातन्त्र्य-समारोह की याद आई। उस दिन कैसा उन्माद था! नौका-विहार में कैसा आनन्द था!! कैसी ताल के साथ नौकाएँ चल रही थीं। उस दिन कुट्टनाट के कुशल और बलिष्ठ परयों और पुलयों ने उन्हें चलाया था। आज वे कहाँ हैं? उन अच्छे दिल वाले विश्वस्त काले भाइयों को जीवन से काटकर अलग कर दिया गया है, ऐसा मालूम होता था। वह वर्ग ही मानो सामूहिक जीवन से बहिष्कृत था।······एक अंग-विहीन जीवन?······यह असह्य था!!

उधर किनारे पर सटी झुकी दिखाई देने वाली झोंपड़ियाँ शून्य, निष्प्राण-जैसी लगती थीं। सब-के-सब इस जलूस को देखकर डर के मारे भाग गए थे। पुलयों और परयों से रहित कुट्टनाट का जीवन कैसा होगा? यह चौंकाने वाला विचार था।

स्टेट-कांग्रेस के विगत वैभव के गुण-गान से सभा की कार्यवाही शुरू हुई। अध्यक्ष का भाषण हुआ, साम्राज्यवाद के विरुद्ध कांग्रेस की लड़ाई की कहानी पर। उसके बाद के वक्ता धारावाही तरीके से क्या-क्या बोलते रहे! ऐसा लगा कि उन्होंने यह बतलाने की कोशिश की कि स्टेट-कांग्रस क्यों कायम है? सभा में आगे बैठे हुए लोगों ने खूब तालियाँ पीटीं।

एक दूसरे वक्ता ने, जो एक प्रमुख किसान थे, इस विषय पर भाषण दिया कि मन्त्रि-मण्डल तिरुवितांकूर-रियासत की किन-किन बातों की उन्नति के लिए प्रयत्न करेगा।

एक बूढ़े ने सभा में उठकर पूछा—"अब तक क्या किया है ?"

यह प्रश्न श्रोताओं को मनोरंजक लगा। सभा में ताज़गी आ गई। एक-एक को बहुत-से प्रश्न पूछने थे। वे प्रश्न राष्ट्रीय चेतना के या स्टेट-कांग्रेस में श्रद्धा कम हो जाने के फलस्वरूप नहीं थे। न वे मार्क्सवाद की प्रेरणा के फलस्वरूप थे; जिसका इसलिए विरोध किया जाता है कि वह एक विदेशी वाद है। वे प्रश्न तो अनुभव और सामान्य बुद्धि से उत्पन्न हुए प्रश्न थे।

अध्यक्ष ने लोगों को शान्त रहने को कहा। सभा में शान्ति छा गई। वक्ता ने कुट्टनाट के किसानों और पुलयों के बीच सदियों से चले आने वाले सौहार्द भाव का वर्णन किया। पुलया कैसा भला था, विश्वास-पात्र था। प्रतिफल की इच्छा किये बिना ही चुपचाप अपना काम करने वाला था। इन सब बातों का बखान करते-करते जोश में आकर उन्होंने कहा—"निश्शब्द रात्रि के स्वच्छ आकाश को देखते समय कई बार मुझे ऐसा लगता है कि वहाँ दिखाई देने वाले सब असंख्य और अज्ञात तारे इस कुट्टनाट के पुलयों और परयों की कुटियों से सिधारे कर्म-योगियों की आत्माएँ हैं। हाँ, इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि प्रतिफल की इच्छा के बिना अपना कर्तव्य कर सकने वाले उन कर्मयोगियों के देश को ही गीता की माता होने का गौरव प्राप्त हुआ है। सभा में सामने बैठने वालों की करतल-ध्वनि फिर गूँज उठी।

वक्ता ने वर्तमान समय की बातें उठाईं। यह रास्ता भयावह है, यह उसे मालूम था। उसका विचार बहुत ही चतुरता से आगे बढ़ने का था। वहाँ एकत्रित श्रोताओं में तीन चौथाई, जो छोटे किसान थे, उन्हें सम्बोधित करके अपनापन जताते हुए उन्होंने कहा—"उन पुण्यात्मा

पाक्कनार और वल्लुवनार[1] की सन्तान ने आज उस महत् सिद्धान्त को त्याग दिया है। कितने दुःख की बात है! आज क्या हो रहा है। कर्तव्य-पालन के लिए प्रतिफल माँगते हैं। इतना ही नहीं, हिसाब भी बतलाते हैं और दूसरों को भी कष्ट पहुँचाते हैं। इस वर्ग ने, जो केरलीय संस्कृति का प्रतीक है, अपना तत्त्व-ज्ञान त्याग दिया।"

किसी ने भी प्रतिवाद नहीं किया। उन्होंने छोटे किसानों की स्थिति का वर्णन शुरू किया। उनकी तकलीफों, उनके कर्ज का बोझ आदि कई बातों के बारे में उन्हें कहना था। वे कह रहे थे—"स्टेट-कांग्रेस ने उन गरीब किसानों की स्थिति सुधारने का वचन दिया था। इसी कार्यसिद्धि के लिए वह कायम है। स्टेट-कांग्रेस यह मानती है कि देश की सम्पत्ति उन्हींकी है। उन छोटे किसानों से, जो कर्ज के बोझ के कारण ठीक से खेती भी नहीं कर पा रहे हैं, मज़दूरी बढ़ाने की माँग करके उनका जो दम घोटा जा रहा है, यह देखते रहना स्टेट-कांग्रेस के लिए असह्य है। उसका

१. पाक्कनार और वल्लुवनार परया जाति में दो प्रसिद्ध सिद्ध पुरुष हो गए हैं। वल्लुवनार वायिल्ला कुन्निल अप्पन (मुख हीन पहाड़ी के देव) के नाम से आज भी एक मंदिर में सब जाति के लोगों द्वारा पूजा जाता है। ये दोनों अपने माँ-बाप के १२ पुत्रों में से अन्तिम दो पुत्र थे। मुख वाला होने के कारण पिता ने हर सन्तान को जन्म होते ही फिंकवा दिया, जिन्हें दूसरी जाति के लोगों ने लेकर पाला। पाक्कनार एक पुरया कुल में ही पाला गया। जब बारहवाँ पुत्र हुआ तब पत्नी ने उसे अपने पास रखने के विचार से, पूछने पर कहा कि उसके मुँह नहीं है। बाद को वह निकला भी मूक। दन्तकथा है कि पिता के मर जाने पर बारहों भाई श्राद्ध के लिए हर साल इकट्ठे होते थे और जिससे जो बन पड़ता था, भोज के लिए लाता था।

उपाय······"

वाक्य पूरा होने के पहले ही एक आदमी ने उठकर कहा—"उसके लिए अध्यक्ष और सामने बैठने वाले जमींदार लोग, लगान की सब रकम छोड़ दें।"

वक्ता स्तम्भित हो गया। लोग और भी कितने ही प्रश्न और सुझाव प्रस्तुत करके और हर्ष-ध्वनि करने लगे। सभा में शोर-गुल मच गया। अध्यक्ष अपने आदेशों और संकेतों से शान्ति स्थापित करने में विफल हुए। वक्ता ने वैयक्तिक धनाधिकार की पवित्रता का गुण-गान करने का असफल प्रयत्न किया। अकस्मात् सभा में से एक आदमी कूदकर मंच पर पहुँच गया और उसने चिल्लाकर कहा—"प्रदर्शन के मैदान में गोली खाकर जो मरे हैं उनमें और हममें कोई अन्तर नहीं है। बेचारे शोषित लोग ! उनका खून थोड़े-से इने-गिने लोग हमारे द्वारा चूसकर मोटे हो रहे हैं। उसके बदले हमको एक झूठा मान दिया जाता है। अब उस शोषक-वर्ग के संगठन के रूप में स्टेट-कांग्रेस के बने रहने की कोई आवश्यकता नहीं है।"

यह राज-द्रोह था। क्या इस प्रकार की बातें होने देनी चाहिएँ ? अध्यक्ष ने सभा विसर्जित करने की घोषणा कर दी। लेकिन उस आदमी ने अपना भाषण बन्द नहीं किया। वहाँ पर उपस्थित भीड़ भाषण सुनने के लिए उत्सुक थी।

अध्यक्ष, सामने की पंक्ति में बैठे दस-पन्द्रह आदमी, चार संन्यासी और तीन पादरी, सब उठकर चले गए। सभा का कार्य ज्यों-का-त्यों चलता रहा। सभा में इस आशय का एक प्रस्ताव भी पास किया गया कि प्रदर्शन के मैदान में हुए हत्या-काण्ड के अपराधियों को दण्ड दिया जाना चाहिए।

स्टेट-कांग्रेस के सारे सदस्यों को जनता ने अपनी ओर खींच लिया। मंत्रि-मण्डल भंग हो गया। इतना ही नहीं, हत्यारों पर खुली अदालत में मुकदमा चलाने का भी निश्चय हो गया।

छब्बीस

वह बहिष्कृत वर्ग इतनी जल्दी सामूहिक व्यवस्था से बहिष्कृत नहीं हो सकता। उस वर्ग की जड़ के सूक्ष्म रेशे जीवन के सब हिस्सों में फैले हुए हैं। उस वर्ग ने अपने हित को बनाये रखने के लिए जान-बूझकर इस सामूहिक व्यवस्था को संगठित किया है। उसे ऐसे मिटा देना सरल काम नहीं था।

देश के सामान्य जीवन में एक परिवर्तन आ गया। सामान्य जनता की माँगों को स्वीकार कर लेना जरूरी हो गया। जनता जमींदारों और धनी लोगों की बात ऐसे ही मानने के लिए तैयार नहीं थी।

एक स्पष्ट वर्ग-संघर्ष ने जो रूप धारण किया वह वर्गहीन समाज के निर्माण का ध्येय लेकर आगे बढ़ रहा है, उसे बढ़ाया जा रहा है। वह उस अन्तिम विप्लव के पास पहुँच रहा है।

कई साल बीत गए। चिरुता के घर में यदि चावल कम खाता

तो बच्चा अपनी अस्पष्ट बोली में कहता—"मामा नहीं खाता, क्यों अम्मी, मामा को प्यार नहीं करती।"

अगर चात्तन उत्तर न देता तो उसका भी कुछ दूसरा कारण था। उसके असंख्य प्रश्नों का, जिनका उत्तर नहीं दिया जा सकता, उत्तर न देता तो भी वही शिकायत।

यह इस बच्चे के छोटे दिमाग में कौन जाने कैसे घुस गया। जैसे भी हो वह जान गया। चिरुता उसे रोक नहीं सकी। उसे सन्देह होने लगा कि बच्चे का कहना ठीक है क्या? हो सकता है। लेकिन उस सम्बन्ध को, जैसा वह था, उससे ज्यादा गहरा वह कैसे बना सकती थी?

चात्तन उसका संरक्षक है। भगवान् ही है। उस-जैसा एक आदमी उसके जीवन में नहीं आया होता तो उसका और बच्चे का गुज़ारा कैसे होता? उस बच्चे के लिए चात्तन मामा और बाप सब-कुछ है। पहले-पहल उसे हाथ में चात्तन ने ही लिया था। बच्चे को अपने जीवन में सबसे पहले सोचने के लिए चात्तन के अतिरिक्त और कौन है?

सच है, चात्तन उस बच्चे के लिए ही जीता है। और सबसे बढ़कर चात्तन का जिन्दगी-भर आशा में रहना और प्रतीक्षा करना क्या वह भुला सकती है?

चिरुता का मन चात्तन के प्रति कृतज्ञता से दबा था। चात्तन के अतिरिक्त उसको शरण देने वाला और कौन है? चात्तन की तनिक भी तबियत खराब होती, या वह लौटने में देर करता तो वह विकल हो उठती थी। चात्तन को स्वस्थ रखना वह अपना कर्तव्य समझती थी।

चात्तन के प्रेम का उसे पूरा विश्वास है। लेकिन उसके बदले में उसने प्रेम नहीं दिया है। यदि इसका बदला दिया जा सकता तो······ लेकिन इस जन्म में वह हो सकेगा क्या?

इस जीवन का अन्त कैसा होगा, यह भी चिरुता ने सोच लिया है।

कुछ वर्ष के बाद जब वेलुत्ता—बच्चे—का बाप लौट आयगा तब भी वह शायद अपने मामा को नहीं छोड़ेगा। लेकिन मामा क्या अपने को उसकी पकड़ में रहने देगा? वह अपने को उससे छुड़ाकर चला जायगा। तब?⋯⋯तब इस घर से उसका क्या नाता रह जायगा?

चात्तन का सारा जीवन पानी में खींची गई लकीर के समान है। मानो उसने कुछ किया ही न हो!

जिसने उसके और उसके बच्चे के लिए अपने जीवन की बलि चढ़ा दी, क्या उसके जीवन को शून्य ही रहने देना ठीक होगा?

कोरन लौट आने पर फिर उसे स्वीकार करेगा? वह उसीके इन्तजार में बैठी रही है, क्या इसका वह विश्वास करेगा?

यदि वह एक शब्द भी कह दे तो चात्तन का नैराश्यपूर्ण जीवन एक क्षण में बदल जायगा।⋯⋯कई बार वह शब्द कह डालने की उसकी इच्छा भी हुई, लेकिन वह शब्द उसके मुंह से नहीं निकला और वह टलता गया।

एक दिन चात्तन ने चिरुता से कहा—"मैंने एक बात सोची है चिरुता!"

चात्तन ने कुछ निश्चय किया है। चिरुता घबरा उठी। वह क्या है, यह पूछने की उसकी हिम्मत भी नहीं हुई।

चात्तन ने आगे कहा—"अब बच्चा भी चार-पाँच साल का हो गया है। तुम भी काम कर सकती हो। कोरन भी दो-तीन साल के अन्दर छोड़ दिया जायगा। मैंने अब तक संघ के लिए कुछ नहीं किया है⋯⋯।"

चिरुता निश्चय नहीं कर सकी कि क्या उत्तर दे। उसकी वाणी मूक थी।

एक शब्द कह देने-मात्र से ही चात्तन अपना निश्चय बदल देता। हाँ, जिन्दगी में थोड़ा भी सुख⋯⋯हाय! लेकिन उस समय भी चिरुता

के मुंह से वह शब्द नहीं निकला। चात्तन ने कदाचित् उसकी आशा की होगी।

चात्तन ने वेलुत्ता से भी कहा।

बच्चे ने कहा कि मामा जाता है तो उसे भी ले जाय।

चिरुता ने रुक जाने को कहा।

चात्तन ने पूछा—"क्यों रुकना चाहिए?"

उसके उत्तर में चिरुता ने फिर रुक जाने को कहा।

चात्तन को लगा कि चिरुता रुकने के लिए कहते समय जरा मुस्करा रही थी।

उस रात को उस घर के ओसारे से चाक-गान[1] के गाये जाने की आवाज़ बाहर के विस्तृत खेतों में फैल गई। एक निराश प्रेमी का दिल आशा की एक क्षीण उष्ण किरण पाकर भी खिल उठता है। चात्तन आशान्वित हो गया।

लेकिन उधर भीतर एक स्त्री का हृदय अनिश्चय की एक बेचैनी की आग में झुलस रहा था। उस अन्धकार में वह मूक वाणी से कितने प्रश्न पूछ रही थी।

फिर ऐसी ही अनिश्चित अवस्था में दिन बीतने लगे।

कुट्टनाट के मज़दूर-संघ और प्रादेशिक स्टेट-कांग्रेस ने मिलकर एक लम्बी कार्य-योजना बनाई तथा जनता के सामने कुछ निश्चित कार्यक्रम रखा। उसके अनुसार जब काम शुरू होने जा रहा था उस दिन चात्तन ने फिर चिरुता से विदा माँगी।

चिरुता में विदा देने की शक्ति नहीं थी। लेकिन········

वेलुत्ता ने मामा से उसे भी ले जाने को कहा। वह मामा का गला

---

१. चाक (चक्र) चलाकर खेत से पानी निकालते समय का गाना।

पकड़कर रोने लगा। चात्तन ने गोद में लेकर आँसू बहाते हुए उसका मुँह चुम्बनों से ढक दिया। फिर सहसा उसे नीचे बैठा दिया और उसे वैसे ही चिल्लाता हुआ छोड़कर चला गया।

कुछ दूर निकल जाने के बाद भी चात्तन को लगा कि बच्चे के रोने की आवाज सुनाई पड़ रही है। लेकिन उसने घूमकर देखा तक नहीं।

चात्तन सीधा संघ के शिविर में चला गया। दाढ़ी बढ़ाए हुए एक आदमी से उसकी भेंट हुई। पहले उस आदमी को वह पहचान नहीं सका। दाढ़ी के बीच से एक पूर्व परिचित आदमी की हंसी खिल उठी।

वह कोरन था। चात्तन एकदम मूक--स्थिर हो गया। उसे कुछ भी नहीं सूझा। वह पत्थर की मूर्ति की तरह खड़ा रहा। उसे क्या-क्या कहना था! कोरन को किसी भी प्रकार की घबराहट नहीं थी। उसने पूछा--"मेरा बच्चा कैसा है चात्तन?"

चात्तन को लगा, 'ये कहता है मेरा बच्चा कैसा है' लेकिन जवाब दे दिया, "अच्छा है।"

"चिरुता?"

"अच्छी है।"

"तुम्हारे कितने बच्चे हैं?"

"एक भी नहीं, एक भी नहीं।" चात्तन की आंखें भर आईं।

"तू रोता क्यों है रे चात्तन? क्या हुआ?"

पीछे से 'मामा', 'मामा' पुकारने की आवाज आई। चात्तन ने घूर-कर देखा। तब तक वेलुत्ता उसके पास पहुँचकर उसकी गोद में चढ़ने लगा। चात्तन ने उसे उठा लिया। वेलुत्ता मामा के कन्धे पर सिर रखकर शान्त हो गया।

कोरन ने चिरुता को देखा; और चिरुता ने कोरन को। दोनों ने एक-दूसरे को पहचान लिया। कुछ क्षण के लिए निस्तब्धता छा गई।

चिरुता को सन्देह हुआ कि पति ने उसे पहचाना कि नहीं। कोरन को सन्देह हुआ कि चिरुता ने उसे पहचाना या नहीं। दोनों अपने को बोलने में असमर्थ पा रहे थे। चिरुता को बहुत-कुछ कहना था। लेकिन मुँह से एक शब्द भी नहीं निकल रहा था। उसने चात्तन से यह सवाल पूछते हुए सुना था कि 'तुम्हें कितने बच्चे हैं'।

अब क्या कहना चाहिए, यह बिना जाने कोरन भी खड़ा रहा।

चात्तन ने कहा—"मेरे भानजे, तू अपने बाप को देख!"

वेलुत्ता ने कोरन को देखा। वही उसका बाप था, जो जेल गया हुआ था।

कोरन ने अपना हाथ बढ़ाया।

वेलुत्ता उसकी बाहों के बीच से निकलकर कोरन की छाती से लिपट गया। ......नहीं, चात्तन ने ही उसे सौंप दिया।

उसी समय चात्तन को न जाने क्या सूझा। अकस्मात् उसने चिरुता का हाथ पकड़कर कोरन के हाथ में थमा दिया; और असाधारण पौरुष और सचाई से प्रेरित होकर बोला—..."हम भाई-बहन थे।"

चिरुता लड़खड़ाती हुई कोरन की भुजाओं में जा गिरी।

दूसरी ओर नारे गूँज उठे—

"इनकिलाब.....जिन्दाबाद।"

"मजदूर-संघ .....जिन्दाबाद।"

वेलुत्ता भी मुट्ठी बाँधे अपने छोटे-छोटे हाथ उठाकर चिल्लाया—"खेत किसका? ...... जोतने.